में पहले प्रारंभ होकर गुप्तों के काल में (चौथी सदी) प्रचलन में आने के बाद वर्ण व्यवस्था की मालिक–गुलाम परिस्थितियां खत्म हो गई थीं. घरेलू कार्यों के लिए ही दासों का इस्तेमाल करते थे. मालिकों की विभिन्न प्रकार की सेवा करना ही इनका काम था. एक तरफ अर्ध गुलामी व्यवस्था, दूसरी ओर वर्णों के वर्गों व जातियों में तब्दील होने का परिणाम जारी रहा. एक ही पेशे के लोगों के एक ही जाति के रूप में बदलाव शुरू हो गया था. पेशा एवं जाति पर्यायवाची बन गए थे.

गुप्तों के काल में एवं उसके बाद भी कई और धार्मिक अधिकार दिए जाने से शूद्रों की स्थिति क्रमशः बदल गई. कई दस्तकारों, आदिवासियों को अछूतों में शामिल करके शूद्र समुदाय को विभाजित किया गया. क्रमशः बढ़ते अछूतों सहित पहले से ही गुलामी की स्थिति में दबे हुए तमाम लोगों को अपरिष्कृत शूद्र माना गया और उनके लिए विशेष रूप से धार्मिक नियमावली बनायी गई. खेत मजदूरों, कुछ 'निम्न' श्रेणी के दस्तकारों एवं और कुछ लोगों को अपरिष्कृत शूद्र माना गया.

मौर्यों के पतन से उत्तर भारत में स्वयंपोषक ग्रामीण व्यवस्था का गठन शुरू हो गया था. जनजातीय बर्बर गणों को स्वयंपोषक ग्राम समाज में शामिल करने के क्रम में जातियों का विस्तार हुआ. जातियों में तब्दील कबीलों के देवी–देवताओं का ब्राह्मणीकरण करके उनके लिए मंदिर बनाए गए थे. जाति व्यवस्था को मजबूत किया गया. इस जाति व्यवस्था एवं यजुर्वेद काल की वर्ण व्यवस्था की सामाजिक बुनियादें एकदम भिन्न थी. आहार उत्पादन की शुरुआती अवस्था में आर्यों के सामने वशीभूत गैर आर्यों के साथ मेहनत करवाकर आहार उत्पादन करवाने के लिए एक शूद्र वर्ण पर्याप्त था. आर्यों में साधारण जनता एवं शासक वर्ग को अलग करने के लिए वैश्य, ब्राह्मण, क्षत्रिय का विभाजन पर्याप्त था. लेकिन स्वयंपोषक गांवों के लिए ये चार वर्ण बिलकुल ही पर्याप्त नहीं थे. खेती के विस्तार के क्रम में सामाजिक उत्पादन विकसित होते हुए, सामाजिक आवश्यकताओं के अनुरूप नए पेशे विकसित होते हुए, नए ग्रामीण समाज के स्थापित होने के दौरान ही वर्ण व्यवस्था के दखल के बगैर ही कई शूद्र जातियां अस्तित्व में आई. असली काश्तकार एवं कारीगर शूद्र बन गए, वैश्य व्यापार तक सीमित हो गए. शूद्रों की संख्या बढ़कर असीमित हो

भारत देश में जाति का सवाल
हमारा दृष्टिकोण

भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी)

व जैन धर्मों की प्रमखता से मदद की. निम्न कर्मकार शूद्र भी अलग–थलग होकर वर्णों की सीढ़ीदार व्यवस्था में ऊपर की ओर चढ़ गए. बौद्ध विहारों में शामिल नहीं हो सकने के बावजूद दास शूद्रों ने भी बौद्ध धर्म की जनवादी आकांक्षाओं को मदद दी. बाद के काल में वाणिज्य का ह्रास हुआ और गांवों पर आधारित अर्थ व्यवस्था का आविर्भाव हुआ. इससे मुख्यतया शहरों पर आधारित बौद्ध विहारों ने अपनी सामाजिक बुनियाद खो दी. भूदानों को स्वीकार कर जमीन की मिल्कियत वाले संगठनों में तब्दील बौद्ध विहार चूंकि जनता की नजर में शासक वर्गों के हिस्से के रूप में दिखें, इसीलिए उनका आकर्षण खो गया था. अपरिमित व्यय युक्त, उपहारों पर आधारित, सुसंपन्न इन बौद्ध विहारों ने ग्रामीण स्तर पर ब्राह्मणों की तुलनायोग्य कोई उपयोगी भूमिका नहीं निभाई थी. दूसरी तरफ नए ब्राह्मणत्व ने अतिरिक्त को लूटने में एवं जनता को दबाकर रखने में उपयुक्त भूमिका अदा की. इसलिए शासकों ने इस नये ब्राह्मणत्व को ही महत्व दिया. उदाहरण के लिए ई. दूसरी सदी में विंध्य के दक्षिण में शातवाहनों, सन् 575 ई. में दक्षिण में पल्लवों ने स्वयं को क्षत्रिय एवं ब्राह्मणों के रूप में घोषित करके वर्ण व्यवस्था का समर्थन किया था. कृषि अर्थ व्यवस्था के लिए उपयोगी अहिंसा, कर्म सिद्धांत, शाकाहार जैसे बौद्ध धर्म के लक्षणों को नया ब्राह्मणत्व ने तब तक अपना लिया था.

करीबन 6वीं सदी से जाति व्यवस्था का भारत के कई इलाकों में संगठित होना शुरू हो गया था. यूरोप में तीसरी सदी के बाद जिस तरह रोमन साम्राज्य का पतन हो गया था, हमारे देश में गुप्तों के काल के बाद व्यापारी संघों, दस्तकारी संघों का ह्रास हुआ, मुद्रा का प्रचलन सिकुड़कर दस्तकार कारीगर गांवों में बस गए एवं स्वयंपोषक ग्रामीण अर्थ व्यवस्था विकसित हुई. इन परिणामों ने जातियों पर आधारित सामंती प्रणाली के उत्पन्न होने के लिए आवश्यक परिस्थितियों को निर्मित किया. सामंती प्रणाली के उत्पन्न होने से करों के रूप में या उत्पादन में हिस्से के रूप में किसानों व श्रमिक जनता से अतिरिक्त को लूटने वाले दलाल वर्ग का उद्भव दिखता है. शुरू में मात्र भूदान (ब्राह्मणों, बौद्ध विहारों, सेना के अधिकारियों एवं अन्य अधिकारियों को) करते थे. बाद के काल में उन्हें शासन संबंधी कार्यभार भी आबंटित किए गए. दलालों को शासन संबंधी कार्यभार सौंपना दूसरी सदी में शातवाहनों के शासनकाल

वर्ग में एवं रूपांतिरित हो गए, अत्यधिक लोग शूद्र वर्ण में धकेल दिए गए.

कबीलाई कुलीन वर्गों को ब्राह्मण और क्षत्रीय वर्णों में शामिल किया गया जबकि अधिकांश श्रमिक बनकर शूद्रवर्ण का हिस्सा बने. बौद्ध धर्म से शाखाहार, अहिंसा एवं कर्म सिद्धांत को ब्राह्मण वर्ण ने स्वीकार किया. पशुपालक कबिलाइयों के ही नहीं, बल्कि बर्बर कबिलाइयों के देवता के रूप में स्वीकार किए गए अवतार पुरुष कृष्ण की उपासना बढ़ गयी. कबीलाई समूहों का संविलयन जारी रहा. इस प्रकार सम्मिलित 'जातियों' के कर्तव्यों व स्थान निश्चित करने वाला 'वर्ण–सुधार' सिद्धांत, मनुस्मृति (ई.पू. दूसरी शताब्दी) अस्तित्व में आ गए.

लोहे के हल के इस्तेमाल के मामले में, तारों के मामले में ब्राह्मणों को हासिल ज्ञान की वजह से एवं 'आर्यीकरण' के द्वारा विभिन्न कबीलों को अपने वश में करने के मामले में ब्राह्मणों की भूमिका के चलते उस समय विकसित खेती आधारित अर्थ व्यवस्था में ब्राह्मणों का सामाजिक आधार एवं महत्व फैल गया. भिन्न–भिन्न संदेहास्पद जड़ों से उत्पन्न हो रहे जागीरदारों की वंशावलि बनाकर ये राज दरबारों में देते थे. यह कई रजाओं के शासन को वैधता प्रदान करने में उपयोगी रहा. उसीलिए विशेषकर गुप्तों के काल(ई.पू. चौथी शताब्दी) में तथा बाद के समय में भी इस नये ब्राह्मणत्व को शासकों की मदद मिल गयी.

ई. 6वीं सदी तक जहां उत्तरी भाग के कुशान और शाकों तथा दक्षिण हिस्सों के विभिन्न कबीलों के वर्ण व्यवस्था में विलय हो गया था एवं वाणिज्य का ह्रास होकर स्वयंपोषक ग्रामीण अर्थ व्यवस्था अस्तित्व में आया था, भारत देश के अधिकांश हिस्सों में इस नव ब्राह्मणत्व व मनुस्मृति पर आधारित जाति व्यवस्था ने अपना प्रभुत्व हासिल किया था.

पूर्व में यज्ञ पर निर्भर ब्राह्मणत्व एवं वर्ण व्यवस्था को चुनौति देते हुए बौद्ध धर्म का आविर्भाव हुआ था. शक्तिशाली वाणिज्यिक संघ एवं दस्तकारी संघ बौद्ध धर्म की मदद में खड़े थे. बौद्ध धर्म ने वैश्य वर्ण की आकांक्षाओं को भी प्रतिबिंबित किया. अर्थ शास्त्र काल के राज्य–तंत्र ने वैश्य वर्ण के कुलीनों (नगर–सेट्टि, गहपति) को कुलीन–तंत्र व सत्ता–तंत्र में सम्मिलित किया. यद्यपि अर्थ शास्त्र का राज्यसत्ता कोई धर्मावलंबी नहीं थी फिर भी उसने बौद्ध

भारत देश में जाति का सवाल
हमारा दृष्टिकोण

भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी)

नोट

भाकपा (माओवादी) की केंद्रीय कमेटी द्वारा 'भारत देश में जाति का सवाल–हमारा दृष्टिकोण' नामक इस दस्तावेज बनाकर मई 2017 में जारी किया गया था। उसके बाद कुछ सीसी सदस्यों से और राज्य कमेटियों के सदस्यों से दस्तावेज पर कुछ सलाहों, व्याख्याओं और संशोधनों केंद्रीय कमेटी के पास आए हैं। केंद्रीय कमेटी ने इसपर चर्चा की और अब इस संशोधित दस्तावेज को जारी कर रही है।

जनवरी 2021 क्रांतिकारी अभिवादन के साथ

केंद्रीय कमेटी

भाकपा (माओवादी)

भारत देश में जाति का सवाल–हमारा दृष्टिकोण

पहला संस्करणः मई, 2017

दूसरा (संशोधित) संस्करणः जनवरी, 2021

केन्द्रीय कमेटी

भाकपा (माओवादी) का दस्तावेज

वर्ग में एवं राज्य यंत्र में शामिल किया गया. इसी काल से ब्राह्मण अपने परंपरागत पेशा–यज्ञ व धार्मिक अनुष्ठानों के आयोजन को उल्लेखनीय तौर पर छोड़कर राज्य यंत्र में शामिल हुए. वे मंत्रियों व राजाओं के सलाहकारों के रूप में मजबूत स्थानों में शामिल हुए.

इस नए तरह का राज्यसत्ता (प्राचीन सामूहिक व राज्य मिल्कियत वाला) वैश्यों द्वारा पटाये जाने वाले करों व शूद्रों के श्रम पर आधारित था. कौटिल्य(चाणक्य) रचित प्रसिद्ध ग्रंथ 'अर्थशास्त्र' ने सीधा बताया कि राजा को शासन कैसे करना है. किसी भी तरह के धार्मिक परदे के बिना इस ग्रंथ ने राजनीति की व्याख्या की. अर्थ शास्त्र में बताया गया राज्य केन्द्रीकृत राज्य था. उसने कृषि एवं वाणिज्य के विस्तार की जिम्मेदारी अपनायी. खदानों पर एकाधिकार स्थापित किया था. जमीन को खेतयोग्य बनाने के लिए संभावित जगहों पर कृषि के लिए आवश्यक सिंचाई सुविधाएं उपलब्ध कराकर शूद्र समुदायों को स्थाई बनाया. बंधुआ गुलाम बने शूद्रों (दास) द्वारा जबरिया श्रम करवाकर राज्य ने ही सीधा सीता जमीनों पर खेती करवायी. जबकि 'राष्ट्र' जमीनों पर स्वतंत्र किसानों (वैश्य) द्वारा खेती करवायी. इन स्वतंत्र किसानों पर राज्य ने विभिन्न कर लगाए. वर्ण व्यवस्था के मालिक और दास के संबंध अस्तित्व में रहते समय प्रधानतया गहपति जो जमीन के मालिक थे, घरेलू कार्य के लिए दासों व गुलामों का इस्तेमाल करते थे या राज्य द्वारा संग्रहित धान की कुटाई, सफाई आदि कार्यों के लिए एवं कुछ मालों के उत्पादन के लिए इनका उपयोग करते थे.

मौर्य साम्राज्य के समय तक तीन किस्म के इलाके थे. कुछ स्थाई निवास वाले गांवों के इलाके, कुछ घुमंतू कृषि समुदायों के इलाके एवं ज्यादातर हिस्सा लोहे के इस्तेमाल से तब भी अनजान पशुपालक – आहार संग्रहण करने गणों वाले जंगली इलाके थे.

कुशल शूद्र कर्मकार स्वतंत्र दस्तकार कारीगरों में तब्दील हो गए. बौद्ध संघों में उन्हें प्रवेश भी मिल गया था. दास शूद्रों जो बंधुआ गुलाम थे, को बौद्ध धर्म में प्रवेश वर्जित था. वैश्यों में से एक विभाग भी रथ तैयार करने जैसे विशेष पेशों में कुशल दस्तकार कारीगरों के रूप में तब्दील हो गया. भारत के इतिहास में, उसके बाद की अवस्था में वैश्यों में से उच्च स्तर के लोग कुलीन

लगे थे. इससे लोहे के फाल वाला हल दक्षिण पहुंच गया. दक्षिण के इलाके में आर्य संस्कृति के फैलाव के लिए सैनिक हमलों की जरूरत उतनी नहीं पड़ी. आर्यों के प्रवेश के पहले के कबीलाई मुखियाओं को राजाओं के रूप में चिह्नित किया गया. कबीलों के पूजारियों को नए ब्राह्मण वर्ण में शामिल किया गया. कबीलाई व्यवस्था का छिन्न भिन्न होकर अतिरिक्त उत्पादन के बढ़ने के चलते व्यापार का विस्तार हुआ.

गंगा नदी के मैदानी इलाकों में धान की खेती सहित कृषि के विकसित होने के साथ ही श्रम विभाजन का विस्तार हुआ, वाणिज्य भी विकसित हुआ. भूमि निजी संपत्ति में तब्दील हो गई. नगर विकसित हुए. वैश्य व्यापारी, गहपति (भूमिस्वामी) जैसे नए वर्ग अस्तित्व में आए. गहपति जमीन की जोताई नहीं करते थे. दासों या शूद्रों से जोतवाते थे. उच्च (पीड़क) वर्णों व निम्न (उपीड़ित) वर्णों के बीच, मालिकों व श्रमिकों के बीच तनाव पैदा होने लगे थे. यह राज्यसत्ता के उद्‌भव का कारण बना. गंगा के मैदानों एवं बिहार में भी शुरुआती राज्यों का उद्‌भव हुआ.

इस तरह स्थापित प्रारंभिक राज्यों के शासक गण एवं शुरुआती राज्य अपने शासन को स्थाई बनाने के लिए व धर्मसम्मत बनाने के लिए यज्ञों पर निर्भर हुए. वर्ण व्यवस्था एवं व्यक्तिगत संपत्ति को कायम किया. उपहारों की जगह करों ने ले लिया. ब्राह्मण एवं क्षत्रिय दोनों पीड़क वर्णों पर कर नहीं लगाए जाते थे.

वैश्य वर्ण से, शक्तिशाली व्यापारिक संघों से, दस्तकार कारीगरों के संघों से नवगठित वर्ग एवं निम्न वर्ण दोनों ने पूरी तरह एवं ऐसे कबीलाई समुदायों जो तब तक हारे नहीं थे, ने इस वर्ण व्यवस्था की विचारधारा एवं उसके द्वारा उपदेशित व्यवस्था को स्वीकार नहीं किया. उस समय उभरती कृषि अर्थ व्यवस्था के लिए भी मवेशियों सहित जानवरों की बलि देने पर आधारित खर्चीले यज्ञों के जरिए किसी तरह का उपयोग नहीं था. अतः कई दर्शन, लोकायत, बौद्ध एवं जैन धर्मों ने महत्व हासिल किया.

ई.पू. तीसरी सदी तक भारत में सबसे पहले पूरी तरह गठित प्रधान राज्य मौर्य साम्राज्य ने इस नई सच्चाई को प्रतिबिम्बित किया. वैश्य वर्ण के संपन्न बनियाओं, व्यापारियों, भूस्वामियों को 'नागरिक जनपद' कहलाने वाले कुलीन

विषय सूची

अध्याय - 1 जाति व्यवस्था का उद्‌भव ... 7

अध्याय - 2 ब्रितानी शासन का प्रभाव, जाति विरोधी आंदोलन ... 23

अध्याय - 3 ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के बाद के काल में बदलाव ... 44

अध्याय - 4 भारत के इतिहास में वर्गों-वर्णों-जातियों के बीच का संबंध ... 67

अध्याय - 5 जाति के उन्मूलन पर विभिन्न गलत रुझान ... 74

अध्याय - 6 जाति के सवाल पर हमारी पार्टी की समझदारी व व्यवहार ... 81

अध्याय - 7 विशेष कार्यक्रम ... 99

अध्याय - 8 नव जनवादी क्रांति के बाद के काल में जाति का सवाल ... 110

नोट

भाकपा (माओवादी) की केंद्रीय कमेटी द्वारा 'भारत देश में जाति का सवाल–हमारा दृष्टिकोण' नामक इस दस्तावेज बनाकर मई 2017 में जारी किया गया था। उसके बाद कुछ सीसी सदस्यों से और राज्य कमेटियों के सदस्यों से दस्तावेज पर कुछ सलाहों, व्याख्याओं और संशोधनों केंद्रीय कमेटी के पास आए हैं। केंद्रीय कमेटी ने इसपर चर्चा की और अब इस संशोधित दस्तावेज को जारी कर रही है।

जनवरी 2021 क्रांतिकारी अभिवादन के साथ

केंद्रीय कमेटी

भाकपा (माओवादी)

वितरण के साधन थे. उपहारों के रूप में संग्रहित अतिरिक्त को क्षत्रिय जो शासक थे एवं ब्राह्मणीय पुरोहित आपस में बांटते थे. उपहार अब स्वेच्छा से समर्पित किए जाने वाले मात्र नहीं रहे, जबरन वसूले जाने वाले थे. राजाओं, पुरोहितों के अधिकार का बेहिसाब बढ़ने व उन कबीलों जिन्हें जीता जाता था, को निम्न वर्णों में शामिल करने को आर्य धर्म व वर्ण विचारधारा ने धर्मसम्मत बना दिया था. आर्य धर्म और वर्ण विचारधारा विभिन्न कबीलों से उभरे वर्गों का विचारधारात्मक व्यक्तीकरण बन गए थे.

आर्यों ने हिंसा के साथ–साथ समायोजन, सामाजिक एवं सांस्कृतिक आत्मसातकरण को भी साधनों के रूप में इस्तेमाल किया. उत्पादन की प्राथमिक अवस्था में मौजूद वर्ण ही वर्ग थे. आर्यों ने उत्पादकों से अतिरिक्त उत्पादन को हड़पने के लिए अनुकूल धार्मिक–दार्शनिक रूप को चुना था. क्रमशः आर्यों और अनार्यों के बीच के अंतर खत्म होकर आर्यों के ही रूप में एक नई कबीलाई अर्थ व्यवस्था का निर्माण हुआ. वैदिक काल के ब्राह्मणों ने जो बलि एवं पूजापाठ के कार्य करते थे, आर्य व्यवस्था को बर्बर समाज में घुसाने के लिए क्रमशः जंगलों में घुसकर स्थानीय आदिवासी समुदायों में मौजूद असंख्य रूढ़ियों को सम्मान प्रदान किया था. उन्होंने कबीलों, राज परिवारों के वंशावलियों को पुराणों के रूप में लिपिबद्ध किया था. स्थानीय कबीलाई मुखियाओं के नजदीकी बनने सांपों, बंदरों की पूजा करने वाले कबीलाई आचार व्यवहारों, नर बलियों, मवेशियों की बलियों को स्वीकार किया था. इस तरह ब्राह्मणों ने कबीलों के अंध विश्वासों पर अनुमोदन का ठप्पा लगाने के जरिए अपने विरोधी शक्तियों का सहयोग हासिल किया था. प्राचीन आदिम कबीलों जिन्हें कृषि क्रियाकलापों के लिए आवश्यक चांद्रायन, खगोल विज्ञान एवं दीर्घकालिक सर्वेक्षण या गणित का ज्ञान नहीं था, को कृषि की बारीकियों से अवगत कराया था. इस नई व्यवस्था के निर्माण के साथ लोहे के हल जैसे नए उत्पादन के साधनों का इस्तेमाल, जीवनयापन के मुख्य आधार के रूप में आहार उत्पादन भी हालांकि ईसा पूर्व 1000 तक ही धीरे से शुरू हो गए थे, लेकिन ईसा पूर्व 600 तक वे गण व्यवस्था के रूप से पूरी तरह बाहर नहीं आ सके.

ईसा पूर्व 6वीं सदी में छोटे–छोटे झुण्डों में आर्य दक्षिणापथ की ओर आने

पुरोहित जीवनयापन करते थे. इस अवस्था में गण संबंधों व रिश्तेदारी पर आधारित कबीलाई निर्माणों का प्रभुत्व जारी था. इन रिश्तों पर आधारित गणों का छिन्न भिन्न होकर विशों, वशीभूत कबीलों द्वारा समर्पित पुरस्कारों व उपहारों पर आधारित होकर जीवनयापन करने वाले एक व्यापक वर्ग–वर्ण के गठित होने के क्रम में ब्राह्मण व क्षत्रिय वर्णों का उदय हुआ. पशुपालक आर्य कबीलों ने स्थानीय कबीलों से खेती को सीखा. इन स्थानीय कबीलाई मुखियाओं के गणों, पुरोहितों के गणों को क्रमशः क्षत्रिय व ब्राह्मण वर्णों में शामिल किया गया था. उस तरह गैर आर्यों को आर्य अपने में शामिल करते रहे. फिर भी क्षत्रिय व पुरोहित मिलकर आर्यों की आबादी में अल्पसंख्यक ही रहते थे. हारे हुए तमाम आर्य व गैर आर्य कबीलें क्रमशः शूद्र वर्ण में तब्दील हो गए. लेकिन शूद्रों में तब्दील सभी लोग गुलाम नहीं थे. हालांकि घरेलू गुलामी मौजूद थी, लेकिन मुख्यतः वैश्य किसानों (रिश्तेदारी पर आधारित विश से व्यापक वैश्य वर्ण का उदय हुआ था.), शूद्रें (अपेक्षाकृत आकार में छोटा वर्ण) ने मवेशियों को चराया था एवं कृषि कार्यों में शामिल हुए थे.

न सिर्फ हथियारों के लिए बल्कि कृषि जरूरतों के लिए भी लोहे का प्रचलन व्यापक होने के साथ ही करीबन ईसा पूर्व 800 से प्राचीन कबीलाई समाजों की उत्पादन व्यवस्था में गुणात्मक परिवर्तन आया. हल के साथ की जाने वाली कृषि लगातार उल्लेखनीय अतिरिक्त पैदा करती है. घने जंगलों को काटकर जमीन को खेतीयोग्य बनाना संभव हुआ. इस तरह प्राचीन काल में कृषि अर्थ व्यवस्था के प्रधान उत्पादन प्रणाली में तब्दील होने को लोहा ने सुगम बनाया. गैर कृषि कबीलों को ध्वस्त करने के जरिए ही कृषि का विस्तार संभव हुआ. गैर कृषि कबीलों को वशीभूत किया गया, जंगलों से, आजीविका के परंपरागत आधार से उन्हें खदेड़ा गया. नये भूभागों को जीतने, अचल बसाहटों को स्थापित करने के मौके उत्पन्न होने के चलते कबीलाई मुखियाओं का महत्व और बढ़ गया. कबीलों पर शासन करने वाले कबीलाई कुलीन तंत्रों का आविर्भाव हुआ. कई कबीलाई मुखियाओं ने अपने स्वयं के गणों, कबीलों, अपने अधीनस्थ भूभागों पर अपने शासन को संगठित किया. ब्राह्मणीय पुरोहित वर्ग ने पहले ही वर्ण व्यवस्था को विकसित किया था. धार्मिक अनुष्ठान और जटिल, और खर्चीले व समय नष्ट करने वाले बन गए. ये अनुष्ठान अतिरिक्त के पुनः

अध्याय – 1

जाति व्यवस्था का उद्भव

भारत की जनवादी क्रांति की विशेष समस्याओं में जाति समस्या एक है. इसके जड़े वर्ण व्यवस्था में और ब्राह्मणवाद में रही हैं. भारत देश के सामाजिक परिणाम के विशेष चरित्र के साथ जुड़ी हुई जाति व्यवस्था, प्राचीन काल से आधुनिक काल तक शोषक वर्गों द्वारा मेहनतकश जनता को लूटने के अत्यंत प्रमुख साधन के रूप में ही रहा है. बहुसंख्यक उत्पीड़ित जनता के शोषण व दमन को सुगम बनाने वाली विचारधारा एवं सामाजिक व्यवस्था के रूप में जाति व्यवस्था भारत के शोषक–शासक वर्गों के लिए इस्तेमाल हो रही है. जाति व्यवस्था के उन्मूलन के लिए सही कार्यक्रम बनाने के पहले हमें यह जानना होगा कि जाति व्यवस्था का उद्भव एवं विकास कैसे हुआ था.

हमारे देश में जाति व्यवस्था की जड़ों का तीन हजार साल से भी ज्यादा इतिहास है. वर्ग समाज के विकास, राज्य सत्ता के उद्भव, सामंती उत्पादन प्रणाली के विकास के साथ शोषणमूलक कृषि अर्थ व्यवस्था में स्वयं की परंपराओं व आदतों वाले कबीलाई समुदायों के निरंतर व अक्सर जबरन विलय के क्रम के साथ जाति व्यवस्था अभिन्न तरीके से जुड़ी हुई है.

निम्नांकित तीन ऐतिहासिक कालावधियों के द्वारा जाति व्यवस्था के उद्भव व विकास को चिह्नित कर सकते हैं.

1. वर्ण व्यवस्था की कालावधिः

ई.पू. 1500–ई.पू. 500 के बीच की कालावधि के दौरान उत्तर–पश्चिम दिशा से देश में पलायन करके आने वाले पशुपालक आर्य कबीलों का स्थानीय कृषि कबीलों व गैर कृषि कबीलों के साथ झड़पों के दौरान वर्ण (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य) वर्गों के रूप में अस्तित्व में आए थे. क्षत्रिय एवं ब्राह्मण शासक गठजोड़ के रूप में एवं वैश्य शोषण के शिकार किसानों के रूप में थे. इस क्रम में कृषि के प्रधान उत्पादन प्रणाली के रूप में अवतरित होने के साथ ही दास बंदियों के रूप में एवं अत्यंत निम्न वर्ण के रूप में शूद्र वर्ण अस्तित्व में आया. इस तरह ई.पू. करीबन 500 के आसपास राजसत्ता का आविर्भाव हुआ.

२. शुरुआती सामंती (Proto- Feudal) राज्य व्यवस्था की कालावधिः

ई.पू. 500 से ई. 400 तक की कालावधि, लोहे के हल के व्यापक रूप से प्रचलन में आयी कालावधि थी, यह अचल ग्राम जीवन युक्त खेती के विस्तार वाली कालावधि थी. इस काल में शासक गठजोड़ के रूप में मौजूद क्षत्रिय एवं ब्राह्मण, वैश्य किसानों से कर या उपहारों के तौर पर अतिरिक्त का शोषण करते थे. व्यापक राजा जमीनों (सीता जमीन) में शूद्रों द्वारा जबरिया श्रम करवाया जाता था. वाणिज्य एवं बड़े–बड़े राज्य विकसित हुए थे. बौद्ध व जैन धर्म फैल गए थे.

३. ब्राह्मणीय जाति आधारित सामंती कालः

सन् 400 से अंग्रेजों के आने के पहले तक की इस कालावधि में राजा और जनता के बीच छोटे–छोटे जागीरदार एवं दलाल जिन्हें भूदान एवं कर वसूलने के अधिकार हासिल था, अस्तित्व में आए. जाति व्यवस्था संगठित हुई. बौद्ध व जैन धर्म कमजोर पड़ गए. ब्राह्मण धर्म ने प्रभुत्व हासिल किया.

ऊपर उल्लेखित अवस्थाएं मात्र अति विशाल कालावधियां थीं. यह सही है कि एक विशाल देश में प्रत्येक इलाके के बीच में फर्क रहता है. लेकिन सामान्य रुझान पूरे देश के लिए लागू होते हैं.

ई.पू. 2000 तक ही हल्की खेती करने वाले कांसा युग के सभ्य समाज भारत में मौजूद थे. सिंधु घाटी इलाके के द्रविडों ने ऐसे काल में जब लोहा व हल की जानकारी नहीं थी, नदियों पर बांध बनाकर नहरों का इस्तेमाल करके फसलें उगाईं. दुनिया में सभ्यता के विकसित होने के शुरुआती दौर में ही मोहंजोदाड़ो, हड़प्पा जैसे शहरों का निर्माण किया था. सिंधु के व्यापारी नैलू, मेसपोटेमिया जैसे प्राचीन सभ्य समाजों के साथ व्यापारिक संबंध रखते थे. उस काल में भारत के उत्तरी एवं दक्षिणी इलाकों में कांसा युग के कृषि समाज, छोटे–छोटे जनजातीय समाज मौजूद थे. कुछ जनजातियां कृषि, आहार संग्रहण, पशु पालन करते थे. दक्षिणी इलाके में समुद्री व्यापार भी था. कांसा युग का उत्पादन लौह युग से कम था. वह उत्पादन पूरा राजन्य, पुरोहित, व्यापारी वर्गों के हाथों में केन्द्रीकृत था.

ई.पू. 1500–500 के बीच पशुपालक घुमंतू जीवन बिताने वाले आर्यों ने भारत में प्रवेश किया. तब तक ही वे कपड़ा बुनना, इलाज करना, हथियार बनाना आदि के जानकार थे. उन्होंने कांसा युग के द्रविडों जो प्राचीन सिंधु सभ्यता वाले सभ्य जनजाति के थे, और अपने से भी पिछड़े पाषाण युग की बर्बर जनजातियों को हराया था. तब तक द्रविडों में मौजूद मातृसत्तात्मक व्यवस्था की जगह आर्यों की पितृसत्तात्मक व्यवस्था की शुरुआत हुई.

आर्य दक्षिण पश्चिम दिशा से प्रवेश करके गंगा नदी घाटी के इलाके की तरफ फैल गए थे. तब तक वे 'राजन्य' कहलाने वाले कुलीन, 'ब्राह्मण' कहलाने वाले पुरोहित, 'विश' कहलाने वाले साधारण गण सदस्यों के रूप में विभाजित थे. पूर्वी दिशा में जारी आर्यों के विस्तार के साथ जुड़े अंतहीन झड़पों व युद्धों में, विभिन्न पशुपालक आर्य कबीलों के बीच, आर्य कबीलों व स्थानीय कबीलों के बीच पानी के स्रोतों के लिए, जमीन के लिए, बाद के काल में दासों के लिए हुए संघर्षों में हारे हुए कबीलों को गुलाम बनाना प्रारंभ हुआ था. उस तरह गुलाम बनाए गए लोगों को दास –दस्यु कहते थे.

आर्यों का अन्य कबीलों के साथ जब भी लड़ाईयां हुई, उनमें दास आर्यो के पक्ष में लड़ते थे. तब तक उत्तर भारत देश में आहार उत्पादन हासिल करने वाले आर्यों का समाज चूंकि निजी संपत्ति वाला समाज नहीं था, वह ऐसा गण समाज था जिसकी जमीन व पशुएं सामूहिक संपत्ति थी, इसलिए जो दास एवं गैर आर्य लोग उन्हें वशीभूत हुए थे, वो गुलाम नहीं बने थे. वे सभी आर्य गणों के लिए समिष्टि सेवक बन गए, वर्ण के हिसाब से शूद्र बन गए. दासों को गुलाम न बनाकर शूद्रों के रूप में वशीभूत करने के चलते भारतीय समाज में रोम तरह की गुलामी व्यवस्था नहीं बन पाई. उसकी जगह अपरिणत गुलाम समाज बन गया.

युद्धों के फलस्वरूप कबीलाई मुखियाओं का महत्व बढ़ गया था. अपनी प्रतिष्ठा बढ़ाने, संगठित करने, अतिरिक्त को लूटने वे कर्मकाण्ड पर निर्भर हुए थे. इन कर्मकाण्डों में सामान्य विश राजन्यों को मवेशियों व दासों को अर्पित करते थे. ब्राह्मणों के साथ मिलकर इन राजन्यों द्वारा छोटे–बड़े यज्ञों को संचालित करना दिन ब दिन बढ़ गया था. इन यज्ञों में विशों द्वारा दिए जाने वाले उपहारों (दान/बलि) पर निर्भर होकर शासक उच्च वर्ग के राजन्य एवं

की मनोभावनाओं को इन आंदोलनों ने व्यक्त किया. हिंसा का प्रयोग करके इस आंदोलन को दबाया गया था. डीके ने अपने जाति विरोधी प्रचार को भी जारी रखा. उसने गणेश की मूर्तियों को ध्वस्त करने, मंदिरों के बहिष्कार का आह्वान किया था. चूंकि भारतीय संविधान जाति व्यवस्था को जारी रखी हुई है, इसलिए 1957 में डीके ने संविधान की हजारों प्रतियों को जलाया. 1950 के दशक में जारी ब्राह्मणवाद–विरोधी आंदोलन उत्पीड़ित जातियों एवं तमिल राष्ट्रीयता की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति था. नाडार जाति के कामराज जब मुख्यमंत्री बने, पेरियार ने कांग्रेस सरकार का समर्थन किया था. उसके बाद उन्होंने डीएमके सरकार का समर्थन किया.

जुझारू प्रवृत्ति के महान वक्ता पेरियार ने स्वाभिमान आंदोलन को जबरदस्त गति दी. दार्शनिक तौर पर अमेरिकन नास्तिक चिंतक इंगरपाल के अनुयायी पेरियार सोवियत रूस की विजय एवं मार्क्सवाद के प्रति आकर्षित हुए थे. गैर ब्राह्मण जातियों के सामाजिक एवं सांस्कृतिक उत्पीड़न के खिलाफ संघर्ष किए. पीड़ित जनता की वास्तविक सामाजिक, आर्थिक परिस्थितियों के साथ जुड़ी समस्याओं को उठाये. तमिल जनता की जनवादी आकांक्षाओं के साथ एकताबद्ध हो गए. फिर भी जस्टिस पार्टी पर निर्भर करना, गैर ब्राह्मण जातियों के सामंती अनुकूल, साम्राज्यवादी अनुकूल कामराज एवं डीएमके का समर्थन करना उनके अंदर के ढुलमुलपन एवं अस्थिरता को प्रकट करते हैं. इसलिए स्वाभिमान आंदोलन व्यापक एवं पूर्ण सामंती विरोधी संघर्ष के रूप में उभरने लायक अपनी क्षमता को विकसित नहीं कर सका. 1940 में तमिलनाडू एवं केरल में जब सीपीआई के नेतृत्व में उत्पीड़ित जातियों की जनता ने वीरोचित सामंतवाद विरोधी संघर्षों को संचालित किया तब स्वाभिमान आंदोलन सिर्फ दर्शक की जगह खड़ी रही. तमिलनाडू में कमजोर स्थिति में होने के बावजूद विकासशील राष्ट्रीय बुर्जुआ ताकतों के हितों को पेरियार ने व्यक्त किया. हमें यह ज्ञात होता है कि चूंकि छोटे नाडार उद्योगपतियों की ओर से उन्हें मदद हासिल थी, उनके भीतर मजबूत राष्ट्रीयता की भावनाएं मौजूद थी एवं शहरों के छोटे व्यापारी ही उनके आंदोलन की प्रधान बुनियाद थे, इसीलिए पेरियार ने उनके हितों का प्रतिनिधित्व किया और उस वर्ग की सीमाओं एवं कमजोरियों को वे लांघ नहीं सके.

गयी, जबकि वैश्य अल्पसंख्यक बन गए.

वर्ण जातियों में तब्दील हो गए. भारतीय चातुर्वर्ण व्यवस्था में किसान को शूद्र का स्थान हासिल था, जबकि मरे हुए मवेशियों की खाल उधेड़कर साफ करने, मवेशियों को काटने जैसे मलिन माने जाने वाले कार्यों को परिवार के दासों के द्वारा करवाया जाता था. भारतीय सामंती समाज में चारों वर्णों के साथ पांचवा वर्ण (पंचम) अछूतों व सबसे निचले (उत्पीड़ित) लोगों के साथ बन गया. वैश्यों का अधिकांश हिस्सा शूद्रों के रूप में अधःपतित होने के क्रम में एवं दासों की संख्या बढ़ने के क्रम में मलिन माने जानेवाले कार्यों के लिए अछूत कहलाने वाला पांचवां वर्ण सृजित किया गया. वर्ण व्यवस्था की बुनियाद को मजबूत करने एवं शूद्रों को दबाकर रखने में कर्म सिद्धांत ने प्रधान भूमिका निभाई. इस विचारधारा के साथ कि वर्ण व्यवस्था का भगवान ने निर्देशित किया है, उसका पालन न करने पर दुष्परिणाम अवश्यंभावी हैं एवं कर्म अपरिहार्य है, इसलिए उसे भोगना ही है, चौथे व पांचवें वर्ण को दबाए रख सके.

व्यापार के कमजोर होने से वैश्य वर्ण आबादी का छोटा हिस्सा बन गया. वैश्य वर्ण के कई लोग किसान बनकर शूद्र वर्ण का हिस्सा हो गए. किसान चूंकि अपने सामंती कुलीनों के आदेश पर युद्ध के लिए तैयार होने वाले अंशकालीन सैनिक थे, इसलिए क्षत्रिय वर्ण भी आबादी का छोटा हिस्सा बन गया. उत्तर में गुज्जर, हूण जैसे हमलावरों शासकगण या शक्तिशाली गण, आर्य–क्षत्रिय एवं दलाल, राजपूत जाति के रूप में व्यवस्थीकृत हो गए. सामंती स्तर के समूहों में गण तथा रिश्तेदारी संबंध, वैवाहिक संबंधों के जरिए मजबूत होकर राजपूत जाति बन गई. राजपूत शब्द मध्य युगों के प्रारंभ में कुछ गांवों पर आधिपत्य रखने वाले के अर्थ को सूचित करने वाले राजपुत्र शब्द से उत्पन्न हुआ. गंगानदी घाटी के इलाके में सिर्फ ब्राह्मण, वैश्य एवं शूद्र रहते थे. इस काल में दक्षिण में गांव के मुखिया को भी महत्वपूर्ण व्यक्ति मानते थे. साधारणतया प्रबल किसान जाति से संबंधित बड़े–बड़े भूस्वामियों ने खेती करने वाले अपने साथी किसानों की जाति से अलग होकर, अपनों के बीच के आंतरिक वैवाहिक संबंधों व रिश्तेदारी के संबंधों के जरिए एक पूरे इलाके में अपनी स्थिति को संगठित किया. इसी क्रम में आन्ध्र प्रदेश में रेड्डी जाति से बड़े रेड्डी, कर्नाटक में गौड़ नामक विशेष जातीय समूहों का आविर्भाव हुआ.

जाति व्यवस्था भारत के सामंतवाद के साथ अभिन्न तरीके से जुड़ गया. इस काल में ही अछूत जातियों की संख्या काफी बढ़ गई. अछूतों के बारे में जिक्र ईसा पूर्व चौथी सदी से ही दिखता है. उदाहरण के लिए पतंजलि ने शूद्रों को दो तरह से–आश्रित व निराश्रित (बहिष्कृत) शूद्रों के रूप में उल्लेखित किया. पहले अछूतों की संख्या सीमित थी. धीरे–धीरे नये–नये कबीलों को इसमें शामिल करना शुरु हो गया था. लेकिन सामंती काल में ही उनकी संख्या बहुत बढ़ गई. उदाहरण के लिए चमार एवं रजकों को अछूतों की श्रेणी में धकेला गया. जबरन वशीभूत कबीलों के जंगलों व जमीनों, जीवनयापन के साधनों व स्वेच्छा को हड़पकर उन्हें अछूत के स्तर तक दबाया गया. शूद्र वर्ण के कुछ दस्तकार कारीगर समुदायों को भी अति शूद्र श्रेणी में धकेल दिया गया. ये मुख्यतः बंधुआ गुलाम खेत मजदूर थे, जिन्हें धार्मिक आदेशों के जरिए संपदा (सोना आदि) व जमीनें देने से इनकार किया गया था. पूरे गांव, विशेषकर भूमिस्वामी वर्ग के लिए मेहनत करना ही उनकी विधि रही. गांव के बाहर दूर में उन्हें बसना होता था. उनकी छाया भी मलिन करने वाला माना गया. इस तरह अछूत श्रमिकों को हेयपूर्ण भौतिक जीवन तथा स्थाई दासता में धकेल कर उनके अतिरिक्त उत्पादन को ज्यादा से ज्यादा लूट सके थे.

ई. 10वीं सदी तक ही, मोहम्मद गजनी के आक्रमण के पहले ही देश में जाति व्यवस्था के संगठित होने का क्रम पूरा हो गया था. सामंती वर्ग जाति व्यवस्था की मदद में खड़ा था. बौद्ध धर्म का प्रचार करने वाले शासक भी जाति व्यवस्था की मदद में ससम्मान खड़े थे. शारीरिक श्रम के साथ जुड़े हुए तमाम जातियों के लोगों (काश्तकार एवं कारीगर) या जिन्होंने ब्राह्मणों के प्रभुत्व या वर्णों के अंतर को सवाल किया, को शूद्रों के रूप में वर्गीकृत किया गया. मनुस्मृति (दूसरी सदी) ने सामंतवाद एवं शोषक वर्गों के आधिपत्य को सक्षम सैद्धांदिक जायजता प्रदान की. अत्यधिक जनता की स्वेच्छा को खतम करके उन्हें निम्न स्थिति का शिकार बनाने का अनुमोदन किया.

13वीं सदी में गुलाम वंश द्वारा उत्तर भारत में तुर्कियों का राज्य स्थापित हुआ. इससे भारत की सामंती उत्पादन प्रणाली में एक मुख्य अवस्था प्रारंभ हुई. तुर्कियों के शासन के तहत शासन व्यवस्था केन्द्रीकृत हुई. कर वसूली के लिए उन्होंने और भी क्रमबद्ध तरीके को शुरू किया. शासक वर्गों की बनावट में

का उपहास उड़ाया. पेरियार की शैली सीधा, सरल एवं आकर्षक व अत्यंत लोकप्रिय थी. धर्म की पकड़ को ध्वस्त करके सभी जातियों के बीच समानता के लिए संघर्ष करके इस आंदोलन ने भौतिकवाद के लिए मार्ग प्रशस्त किया था. सूदखोरों के शोषण के खिलाफ एवं किसानों की समस्याओं पर स्वाभिमान आंदोलन ने प्रचार कार्यकलापों को संचालित किया था.

कम्युनिस्टों एवं पेरियार के रूसी दौरे के प्रभाव के चलते 1930 में तमिलनाडू के स्वाभिमान आंदोलन ने समाजवाद का समर्थन किया था. सिंगारवेलु जैसे कम्युनिस्टों ने इनकी पत्रिका के जरिए भौतिकवादी दर्शन एवं समाजवाद का प्रचार किया था. स्वाभिमान आंदोलन में दो रुझान सक्रिय थे. एक रुझान सामाजिक सुधारों तक ही सीमित होना चाहता था, जबकि दूसरा रुझान पूंजीवादी विरोधी प्रचार एवं गतिविधियों को अपनाना चाहा था. नियमित रूप से संचालित अपनी महासभाओं के साथ–साथ स्वाभिमानी समाजवादियों ने किसानों की समस्याओं पर उन्हें संगठित करने की कोशिश भी की. सीपीआई के नेताओं के प्रभाव से स्वाभिमानी समाजवादी(समधर्म ग्रुप) नवंबर, 1936 में कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी में शामिल हो गए. गैर ब्राह्मण सरकार पर हमले करने एवं सोवियत बोल्शेविजम का प्रोत्साहन करने के कारण पेरियार को ब्रिटिश सरकार के दमन का सामना करना पड़ा. पेरियार पीछे हट गए. स्वाभिमान आंदोलन अपने सोशल रॉडिकलिज्म को मजबूती से कायम नहीं रख सका. सामंती भू–संबंधों पर संपूर्ण हमले की आशा करने वाली जनता की मनोभावनाओं को वह अभिव्यक्त नहीं कर सका.

उसके बाद पेरियार जस्टिस पार्टी में शामिल हो गए. बाद में 1942 में उन्होंने द्रविड खजगम (डीके) की स्थापना की. दूसरे विश्व युद्ध के दौरान उन्होंने अंग्रेजों का समर्थन किया. 1947 में सत्ता परिवर्तन के समय प्रारंभ किए गए आन्दोलन के दौरान 'ब्राह्मण राज्य' से आजादी की मांग करते हुए पेरियार ने अगस्त 15 को 'शोक दिवस' के रूप में मनाने का आह्वान किए थे. राज गोपालाचारि के नेतृत्व में कांग्रेस के शासनकाल में हिन्दी भाषा को थोपने के खिलाफ तमिलनाडू में डीके ने मजबूत आंदोलन किया था. तमिलनाडू में 1943 में, बाद में 1952 में, फिर 1965 में हिन्दी विरोधी आंदोलन हुए. अखिल भारतीय दलाल नौकरशाही पूंजीपति वर्ग के प्रभुत्व के खिलाफ उभरी तमिल राष्ट्रीयता

किया. जबकि ई.वी. रामस्वामी पेरियार के नेतृत्व वाला एवं और भी ज्यादा जनाधार वाला रैडिकल स्वाभिमान आंदोलन प्रशासनिक पदों के मामले में गैर ब्राह्मण जातियों के हितों की रक्षा तक सीमित नहीं हुआ था. उससे भी आगे जाकर उसने जाति व्यवस्था एवं ब्राह्मणीय हिन्दू धर्म के खिलाफ संपूर्ण हमले को जारी रखा था.

सन् 1879 में ईरोड में एक संपन्न नायकर परिवार में पेरियार का जन्म हुआ था. स्थानीय असहयोग आंदोलन में वे सक्रिय रूप से शामिल हुए. वे कांग्रेस में शामिल हुए. 1924 में अछूत जातियों के मंदिर प्रवेश के लिए जारी वैकाम सत्याग्रह में वे शामिल हुए. उस मामले में दखल देते हुए गांधी के द्वारा यह कहने से कि उक्त मामला हिन्दुओं का आंतरिक विषय है, पेरियार ने कांग्रेस के संप्रदायवादी नेतृत्व पर हल्ला बोला. 1925 में गैर ब्राह्मणों के विशेष प्रतिनिधित्व के लिए मदद देने कांग्रेस तैयार नहीं हुई थी. उसके चलते कांग्रेस से बाहर आकर पेरियार ने स्वाभिमान आंदोलन (सुया मरियादै इयक्कम) की शुरुआत की थी. पेरियार द्वारा शुरू किया गया आंदोलन मद्रास राज्य के तमिल इलाकों में केन्द्रित हुआ. उभरते मजदूर वर्ग, मध्यम वर्ग एवं व्यापारियों से इस आंदोलन को समर्थन मिला. विशेषकर ईरोड, मधुरई, कोयम्बत्तूर, सेलम, तिरुच्चिरापल्ली, टूटीकोरन आदि शहरी इलाकों में इस आंदोलन को व्यापाक मदद हासिल हुई. यह आंदोलन अछूतों सहित तमाम उत्पीड़ित जातियों के लिए उद्देश्यित था. महिलाओं व युवाओं को इस आंदोलन में भागीदार बनाने के लिए आवश्यक कार्रवाईयां अपनाई गई. 'कुड़ि अरसु' नामक पत्रिका का संचालन किया गया. न सिर्फ ब्राह्मणों के खिलाफ बल्कि धर्म, अंधविश्वास, रूढ़ियों, जातीय विभाजन एवं जाति आधारित अधिकारों के खिलाफ भी इस स्वाभिमान आंदोलन ने नास्तिक दृष्टिकोण युक्त जुझारू हमले को जारी रखा. निम्न जातियों में आत्मसम्मान एवं समानता की भावनाओं को जागृत करने की पेरियार की मंशा थी. तमिल भाषा को गर्व करने योग्य भाषा के रूप में ऊंचा उठाते हुए उन्होंने संस्कृत भाषा का विरोध किए थे. शादियों में ब्राह्मण पुरोहितों के इस्तेमाल पर प्रतिबंध लगाने का प्रचार करते हुए आत्म सम्मान की शादियों को प्रचलन में लाया. 'राली' का विरोध करके जातियों के उपनामों के इस्तेमाल पर प्रतिबंध लगाने का आह्वान किया था. रामायण जैसे पौराणिक इतिहासों

बदलाव आ गए. शुरुआत में तुर्कियों के दास परिवार एवं उनके रिश्तेदारों ने शासन किया. उसके बाद धीरे–धीरे उनकी जगह में उनकी भारतीय संतान के गुलाम, भारतीय बने तुर्कियों, विदेशों से पलायन करके आनेवालों ने प्रवेश किया. इनके अलावा और भी कई विदेशी, निम्न जातियों के हिन्दू भी शासक बन गए. इन्होंने कर वसूली के हक की (इक्ता) पद्धति से संबंधित महत्वपूर्ण बदलाव किए. पहले कर वसूलने का यह अधिकार सिर्फ संबंधित व्यक्ति के जीवनकाल तक ही सीमित था. लेकिन 15वीं सदी की आखिरी तक वह वंशानुगत हासिल होने वाला बन गया. तुर्कियों ने शहरों को अपना केन्द्र बनाया. वे इस्लाम धर्म को मानते थे. इस तरह उन्होंने पहले के जागीरदारों को हटाकर उनकी जगह धीरे–धीरे नये लोगों को नियुक्त किया था.

तुर्कियों द्वारा अमल में लाए गए शासन संबंधी बदलावों का दक्कन इलाके में भी अनुसरण किया गया. सैनिक सेवाओं में रहनेवाले, प्रशासनिक अधिकारी, गांव के मुखिया, पुरोहित वर्ग, कर वसूली के अधिकारों से संबंधित एवं प्रशासन संबंधी बदलावों के प्रभाव का शिकार हो गए. कार्यालयीन अधिकारियों को ईनामदार, वतनदार, इक्तादार, देशमुख, देशाय बाद के काल में यानी मुगल काल में जागीरदार कहा गया. उत्तर भारत में सामंती वर्ग अस्थिरता का शिकार हो गया. कुछ पदच्युत पुराने दलाल तुर्कियों के उस शासनकाल, जिसमें सामंतीवर्ग अस्थिर था, के बाद के काल में अपने पदों को फिर से हासिल कर सके थे. युद्ध कला में तुर्कियों ने नये तरीके शुरु किए. शहरी इलाकों के वाणिज्य, व्यापार, दस्तकारी को उन्होंने प्रोत्साहित किया. नतीजतन इस काल में भारतीय समाज में उत्पादन शक्तियों का विकास नजर आता है.

दक्षिण भारत देश में शासक वर्गीय संरचना किसी भी तरह के बदलाव का शिकार नहीं हुई. लेकिन निम्न जातियों के कुछ विभाग शासक वर्गों में शामिल किए गए. उदाहरण के लिए नायकर जो सैनिक वर्ग के थे, विजय नगर साम्राज्य में 'अमरम' नामक निश्चित कालावधि के लिए अधिकार हासिल जमीनें प्राप्त करके दलाल बन गए थे. इस काल में कई कबीलाई राज्यों का उद्भव हुआ. ई. 13वीं सदी में हिमालय पर्वतों के डोम, ई. 13 से 18 वीं सदियों के बीच असम के बोड़ो, ई. 12वीं सदी में छोटा नागपूर एवं पलामू के नागबंशी,

एवं चेरो, ई. 15 से 18वीं सदी के बीच मध्य भारत के गोंड, ई. 13वीं सदी में दक्षिण गुजरात के महदेव कोलियों ने अपने राज्यों की स्थापना की. पड़ोस के मैदानी इलाकों से तकनीकी ज्ञान व संस्कृति को अपनाकर ये कबीलें स्थाई खेती की अवस्था में विकसित हुए थे. तब तक इन कबीलाई समाजों में असमानताएं बढ़ गईं. पहले उन्होंने ब्राह्मणीय हिन्दुत्व का विरोध किया. लेकिन बाद में उन्होंने हिन्दू धर्म या बौद्ध धर्म को अपनाया. या इस्लाम धर्म में शामिल हो गए. मराठों या मुगलों के शासनकाल में वे जागीरदार बन गए.

व्यापार एवं माल उत्पादन के विकास, राजनीतिक व सांस्कृतिक बदलावों ने सामंती समाज के भीतर जातीय व्यवस्था के खिलाफ विरोध उत्पन्न होने की भौतिक परिस्थितियों का सृजन किया था. इस परिणाम ने 12वीं सदी में दक्षिण भारत में, उसके एक सदी के बाद उत्तर भारत में व्यापारियों व दस्तकार कारीगर समुदायों के मजबूत होने व अपने हितों के लिए दृढ़तापूर्वक खड़े होने की राह बनाई. दक्षिण भारत में उस दिशा में एडगै(दायें हाथ), बलगै(बायें हाथ) नामक जातीय संगठन शुरू हो गए थे. यह माल उत्पादन प्रणाली एवं बाजार के विकास को सूचित करता है. एडगै ने माल उत्पादक पेशों वाली जातियों का प्रतिनिधित्व किया था तो बलगै ने व्यापारी जातियों का प्रतिनिधित्व किया था. अक्सर ये संघ संयुक्त रूप से सामंती शोषण की खिलाफत करते थे. उत्तर भारत में 'जुलाहा' कारीगर जातियों (बुनकर) ने इस्लाम धर्म अपनाया.

ई. 12–17वीं सदियों के बीच जाति व्यवस्था के प्रति एवं ब्राह्मणीय प्रभुत्व के प्रति उल्लेखनीय विरोध व्यक्त करते हुए जनता को आकर्षित करने वाले भक्ति आंदोलन का उदय हुआ था. इन धार्मिक सुधारकों में हालांकि कुछ ब्राह्मण भी थे, लेकिन भक्ति आंदोलन के प्रवक्ताओं में ज्यादातर कुम्हार, बढ़ई, जुलाहा आदि दस्तकार पेशों से संबंधित लोग ही थे. नंदन (नयनार), तिरुप्पन(आलवार), चोकमेला, संत रोहिदास जैसे कुछ लोग अछूत जातियों के थे. इस आंदोलन ने महिला प्रवक्ताओं को भी सामने लाया. इस भक्ति आंदोलन में रामानुज, ज्ञानेश्वर, चैतन्या जैसों की दक्षिण पंथी धारा, जिसने एक ही ईश्वर की उपासना पर जोर दिया था, भी थी. बसवन्ना, तुकाराम, नामदेव, कबीर, गुरुनानक जैसे प्रवक्ताओं वाले और भी रैडिकल धारा ने जातीय भेदभाव एवं ब्राह्मणीय कुटिलता का पर्दाफाश किया था. उनमें से कुछ ने सामाजिक

समाज के कार्यक्रम से असंतुष्ट सामंती व धनी किसान विभागों ने 1915 में ब्राह्मणवाद–विरोधी पार्टी का गठन करके जिला बोर्ड का चुनाव लड़कर विधानसभा में प्रवेश किया. 1920 में इस पार्टी ने तिलक और कांग्रेस का कड़ा विरोध किया था. 1930 में इस पार्टी का एक बड़ा तबका कांग्रेस में शामिल हुआ और सहकारी संघों का मुखिया बनकर मराठा राष्ट्रीय दुरहंकार की चेतना को बढ़ावा दिया. सत्यशोधक समाज जातीय व्यवस्था एवं सामंतवाद को कुछ हद तक सुधार सका.

पेरियार एवं स्वाभिमान आंदोलन

एक समय के मद्रास प्रेसिडेन्सी का धार्मिक व आर्थिक सत्ता ब्राह्मण जातियों के हाथों में थी. उस प्रेसिडेन्सी में आधुनिक शिक्षा एवं प्रशासनिक क्षेत्रों में भी ब्राह्मणों का बोलबाला था. ऐसे हालात में निम्न जातियों में बाल्यावस्था के बुर्जुआ वर्ग एवं सुशिक्षित बुद्धि जीवियों के उभरने के साथ ही तमिलनाडू में ब्राह्मणवाद–विरोधी आंदोलन का उद्भव हुआ. महिला शिक्षा, विवाह संबंधी सुधार, अस्पृश्यता का उन्मूलन, विभिन्न जातियों को आपस में मिल जुलकर रहने की वकालत करने वाले सामाजिक सुधार आंदोलन ने तमिलनाडू में ब्राह्मणवाद–विरोधी आंदोलन की शुरुआत की. मद्रास हिन्दू सोशल रिफार्म एसोसियेशन (1892) रूपी इस आंदोलन में बुद्धिजीवियों के प्रगतिशील विभाग शामिल हुए. निम्न जाति के नाडार जो ताड़ निकालते थे, व्यापार के जरिए आर्थिक रूप से मजबूत हो गए. 1899 में शिवकाशी के समीप शहरी नाडारों ने एक मंदिर में प्रवेश करने की नाकाम कोशिश की. इससे सामंती मारवार और नाडारों के बीच हिंसात्मक झड़पें हुईं. यह इस बात का उदाहरण था कि सामाजिक विभाजन के चलते परंपरागत असमानताओं एवं सीढ़ीदार सामाजिक व्यवस्था के खिलाफ उस समय निम्न जातियां जागृत हो रही थी. जाति आधारित निर्वाचन क्षेत्रों के जरिए विधान सभाओं में प्रतिनिधित्व हासिल करने, उसके प्रभाव का इस्तेमाल करके प्रशासनिक मशीनरी में पद हासिल करने की इच्छा रखने वाली जस्टिस पार्टी के गठन के लिए इस आंदोलन ने रास्ता बनाया था.

मजबूत ब्रिटिश अनुकूल रुख के साथ जस्टिस पार्टी ने गैर ब्राह्मण पीड़क जातियों के बड़े भूस्वामियों व व्यापारियों के हितों का स्पष्ट रूप से प्रतिनिधित्व

नहर का पानी का इस्तेमाल नहीं कर सकते थे, के खिलाफ संघर्ष किए. वे स्वयं प्रायोगिक तौर पर सिंचाई के लिए पानी का इस्तेमाल करके दूसरों के लिए मार्गदर्शक बन गए. सहकारी संगठनों के गठन का उन्होंने हार्दिक समर्थन दिए. दरअसल सत्यशोधक समाज के कार्यक्रम में वह एक मुख्य मुद्दा था. सबसे पहले फूले ने ही शूद्र किसानों के पुनर्जीवन के प्रतीक के रूप में शिवाजी का इस्तेमाल किए थे. मराठी भाषा में अध्यापन के लिए एवं शासकीय मशीनरी में वंशानुगत पदों के रद्द के लिए उन्होंने संघर्ष किए. उनका जनवादी दृष्टिकोण किसानों के साथ दृढ़तापूर्वक मित्रता जारी रखने में उनकी मदद की. उनका कार्यक्रम ब्राह्मणत्व एवं शेठजी भटजी वर्ग के शोषण के खिलाफ था. सत्यशोधक समाज के कार्यक्रम ने किसान वर्ग के हितों को प्रतिबिम्बित किया था.

फूले के निधन के बाद भी अहमदनगर, सातारा, कोल्हापुर जिलों में सत्यशोधक समाज की गतिविधियां जारी रही. बेरार इलाके के अमरावती तक भी उसके क्रियाकलापों का विस्तार हुआ. सत्यशोधक समाज की 'तमाशा' टोलियों के प्रचार ने 1919–22 में सातारा, 1930 में बुलडाणा में किसानों के विद्रोह की राह बनाई. आनंदस्वामी के नेतृत्व में किसानों ने भूमि किराये में कटौती की मांग की थी. ब्राह्मणों व देवताओं की निंदा की. सूदखोरों को दण्डित किया. ब्रिटिश तिजोरियों को जब्त किया. पुलिस थानों पर हमले किए. वास्तव में किसानों ने ग्रामीण इलाकों के सामंती अधिकार एवं ब्रिटिश अधिकार पर सभी किस्म के हमले किए. तद्वारा सामंती विरोधी, साम्राज्यवाद विरोधी चेतना को जगाया. गैर ब्राह्मण भूस्वामि वर्ग ने इन कार्रवाइयों का समर्थन नहीं किया. बल्कि उनकी निंदा की. इन आंदोलनों के चलते पश्चिमी महाराष्ट्र में ब्राह्मण भूस्वामी गांव छोड़कर चले गए. 1940 में भूस्वामियों एवं सूदखोरों के गठजोड़ तथा ब्रिटिश शासन के खिलाफ जारी आंदोलनों के लिए इन विद्रोहों ने मार्ग प्रशस्त किया. 1940 के दशक के आंदोलन के दौरान नाना पाटिल ने समांतर सरकार – पत्री सरकार का गठन किए थे. बाद के काल में ब्राह्मण–विरोधी आंदोलन की यह धारा पीजन्ट्स एण्ड वर्कर्स पार्टी में, लाल निशान पार्टी में शामिल हो गई थी. जनाल्कर एवं नाना पाटिल भारत की कम्युनिस्ट पार्टी में शामिल हो गए. व्यापक लोकप्रियता हासिल सत्यशोधक

सुधारों को भी अपनाया. कबीर, गुरुनानक हिन्दू धर्म के दायरे से अलग हो गए थे. भगवान एवं भक्त के बीच के वैयक्तिक संबंध पर जोर देने वाले इस आंदोलन ने जातीय सीमाओं को लांघ दिया था. ज्ञान पर एवं वेदों पर एकाधिकार के ऊपर आधारित ब्राह्मणीय आधिपत्य की भावना को इस आंदोलन ने बहुत बड़ा धक्का दिया.

सामंती वैचारिक व भौतिक बुनियाद पर भक्ति आंदोलन ने बड़ा प्रहार किया था. स्थानीय भाषाओं में प्रवचन देने वाले भक्ति आंदोलन ने क्षेत्रीय भाषाओं को महत्व दिया. इसके जरिए विभिन्न इलाकों में राष्ट्रीय भावना के विकास की नींव डाली. लेकिन चातुर्वर्ण व्यवस्था का समर्थन करके ब्राह्मणीय प्रभुत्व व प्रतिष्ठा को पुनर्स्थापित करने की इच्छा रखने वाले रामदास, तुलसीदास के रूप में भक्ति आंदोलन की आखिरी अवस्था में एक दक्षिण पंथी रुझान पैदा हुआ था. फिर भी कुल मिलाकर देखा जाए तो भक्ति आंदोलन प्रधानतया धार्मिक व सामाजिक सुधारों के लिए जारी आंदोलन था. तत्कालीन ऐतिहासिक सीमितताओं के चलते सामंती उत्पादन प्रणाली एवं सामंती उत्पादन संबंधों, जो कि जाति व्यवस्था की बुनियाद थीं, पर यह आंदोलन हमला नहीं कर सका. इसलिए यह आंदोलन जाति व्यवस्था को ध्वस्त करने में विफल रहा.

ई. 16वीं सदी में मुगल भी उत्तर व दक्षिण में उन राज्यों, जिन्हें वे जीते थे, के शासक गुटों, राजपूत नेताओं एवं अन्य पीड़क जातियों के दलालों की मदद से अपने अधिकार को संगठित किया था. मुगलों ने मुद्रा के रूप में कर वसूली प्रारंभ किया था. सिंचाई व्यवस्था में बदलाव लाए. कृषि उत्पादन व व्यापार भी बढ़ गए. फिर भी मुगलों का शासन ग्रामीण स्तर के सामाजिक निर्माण के ढांचे को बदल नहीं सका. ग्रामीण निर्माण की अग्रिम पंक्ति में प्रशासनिक जिम्मेदारियों एवं अधिकार हासिल ऊंची (पीड़क) जातियां, ब्राह्मण या राजपूत दलाल एवं बड़े भूस्वामी थे. वे जोतदारों व बटाईदारों से वसूल किए जाने वाले कर पर या कबीलों, बंधुआ मजदूरों या अछूतों के श्रम पर निर्भर होकर जीवनयापन करते थे. शूद्र जागीरदार क्षत्रियों के स्तर तक विकसित हुए. कुछ एक संदर्भों में ब्राह्मण का दर्जा भी हासिल किए. सदियों से काश्तकारी जातियां यह कहती रही कि चूंकि उनके और भूस्वामियों के बीच

व्यवस्थीकृत जजमानी / बलूतेदारी व्यवस्था है, इस कारण से जमीन उनकी है और जमीन पर हक एवं उत्पादन में हिस्सा उन्हें मिलना चाहिए. फिर भी इस व्यवस्था ने पीड़क जातियों, जो मुफ्त श्रम को कई गुना बाहर निकालते थे, को ग्रामीण स्तर पर भी मानव श्रम से पूरी तरह अलग होने की अनुमति दी. आखिर बंधुआ पद्धति भी अस्तित्व में आई. इस पद्धति के चलते एक गैर आर्थिक एवं दमनकारी संबंध स्थापित हो गया. अछूत जातियों को निम्न श्रेणी के कार्य आबंटित किए गए. हालांकि उनमें से कुछ को गांव की थोड़ी सी जमीन पर काश्तकारी करने का हक हासिल था, लेकिन अत्यधिक लोग कुछ परिवारों के बंधुआ मजदूरों, घरेलू दासों, भूमिहीन अर्ध गुलामों के रूप में रहते थे. मुगलों के शासनकाल में बंधुआ मजदूर आबादी का 10 प्रतिशत रहते थे. दक्षिण में इन बंधुआ मजदूरों का प्रतिशत और ज्यादा था.

इस्लाम धर्म व्याप्ति – जाति : हमारा देश में मुस्लिम राजाओं के मुहिमों से बहुत समय पहले ही धार्मिक गुरूओं के जरिए इसाई और इस्लाम धर्म केरल राज्य में प्रवेश किये. मुगलों के शासनकाल में राज्य विस्तार के साथ उन धर्मों का विस्तार भी हुआ. लेकिन पीड़क जातियों वालों मुस्लिम राजाओं से आश्रय मांग कर, संपत्तियों के लिए, उच्च पदों के लिए इस्लाम को स्वीकार कर लिया. पिछड़ी जातियों, मुख्य रूप से दलितों ने हिंदू धर्म की जाति भेदभाव को सहन नहीं कर पाए, उससे मुक्ति के लिए इस्लाम को स्वीकार कर लिया. इस्लाम में जातीय भेदभाव के न रहने के कारण तुर्कियों का शासन जाति की जंजीरों के कुछ हद तक शिथिल होने में मददगार रहा. लेकिन स्थानीय स्तर से लेकर केन्द्रीय स्तर तक सत्ता के स्थानों के नजदीक पीड़क जातियां ही रहती आई. इस्लामिक सामंतवाद ने हिन्दू सामंतवाद के साथ दोस्ती की, सांठगांठ किया. फलस्वरूप उत्पादन के संबंधों में यानी बुनियाद में किसी भी तरह का मौलिक बदलाव संभव नहीं हुआ. ब्रिटिश पूर्व के सामंती राज्यों ने मुफ्त में श्रम को निचोड़ने विशेषकर जन उपयोगी कार्यों के लिए श्रम को निचोड़ने के लिए एवं जातीय विवादों में मध्यस्थता करने के जरिए आर्थिक फायदा हासिल करने के लिए जाति व्यवस्था को बचा कर रखा था. आखिरी लेकिन महत्वपूर्ण मामला यह है कि जाति व्यवस्था ने सत्ता चलाने के शासकों के 'हक' का समर्थन किया, उनके शासन को न्यायसंगत ठहराया.

किया था.

फूले एवं सत्यशोधक समाज

1873 में ज्योति बा फूले द्वारा पुणे में सत्यशोधक समाज की स्थापना के साथ महाराष्ट्र में ब्राह्मणवाद–विरोधी आंदोलन ने एक ठोस रूप अपना लिया था. माली जाति (सब्जी भाजी उगाकर व्यापार करने वाली जाति) के एक मध्य वर्गीय परिवार में फुले का जन्म हुआ था. ईसाई मशीनरी की शाला में उनकी पढ़ाई हुई. स्वेच्छा, समानता जैसे पश्चिमी आदर्शों विशेषकर अमेरिका के उदारवादी टाम पेइन की रचनाओं से प्रेरित होकर फूले ने सामाजिक सुधारों पर काम करना शुरू किया. पेशवा उत्पीड़कों के शासन को अंत करने वाले ब्रिटिश शासकों के पूंजीवादी विकास एवं पश्चिमी सोच को सभी जातियों तक पहुंचाया. उस समय के पूर्वी देशों के कई बुद्धिजीवियों के ही जैसे फूले ने भी पश्चिमी पूंजीवादी प्रणाली से बहुत कुछ आशा की थी. जनता के उत्पीड़ित तबकों, मुम्बई के मजदूर वर्ग, किसानों, पुणे एवं उसके इर्दगिर्द मौजूद अछूतों के बीच में फूले ने अपने काम केन्द्रित किए. उन्होंने अपने गीतों, पुस्तकों, नाटकों के माध्यम से यह उजागर किए कि शेठजी–भाटजी वर्ग (सूदखोर, पुरोहित वर्ग) द्वारा जनता खासकर किसानों को किस तरह धोखा दिया जा रहा था. जनता की भाषा में सीधी सादी शैली में उन्होंने रचनाएं की. सत्यशोधक समाज इस बहुप्रचलित लोक कथा कि आर्य दुराक्रमणकारियों द्वारा स्थानीय किसानों को धोखा देकर उनके राजा बलि के शासन को हराकर उन्हें गुलाम बनाया गया था, की मदद से नस्ल आधारित जाति व्यवस्था के उद्भव के सिद्धांत की व्याख्या करते हुए किसानों के साथ संबंध स्थापित किया. सत्यशोधक समाज ने ब्राह्मण पुरोहितों द्वारा की जाने वाली शादी के रस्म का तिरस्कार किया था. महिलाओं के लिए शालाओं, अनाथ महिलाओं के लिए आश्रमों को प्रारंभ किया. उन नाईयों की हड़ताल का नेतृत्व किया, जिन्होंने विधवाओं का मुण्डन न करने का निर्णय लिया था. अछूतों के लिए शालाएं प्रारंभ की. प्याऊ कुंओं को उनकी पहुंच में लाया. फूले के मार्गदर्शन में एनएम लोखण्डे ने मुम्बई के जूट मजदूरों के सबसे पहले सुधारवादी संगठन – मिल हैण्ड्स एसोसियेशन का गठन किए थे. किसानों के बीच में उन्होंने आधुनिक खेती के विस्तार के लिए प्रयास किए. इस अंध विश्वास कि

ब्राह्मणवाद–विरोधी आंदोलन

गैर ब्राह्मणीय जातियों में नए वर्गों के विकसित होने से उन जातियों में जनवादी चेतना के विकास की राह बनी. ब्राह्मणीय सामंती आधिपत्य एवं शोषण के खिलाफ शूद्र एवं अति शूद्र जातियों को गोलबंद करने के जरिए 19वीं सदी की आखिरी में दक्षिण, पश्चिम भारत में ब्राह्मणवाद–विरोधी आंदोलन सामने आए थे. इन आंदोलनों ने जातीय उत्पीड़न से संबंधित विभिन्न विषयों, रूढ़ियों, जाति व सामंती आधिपत्य व हकों, पदों के अनुवांशिक चरित्र, एवं संस्कृत पर आधारित शिक्षा आदि पर अपना ध्यान केन्द्रित किया था. जातीय उत्पीड़न के बारे में बताने हेतु द्रविड नस्ल को जीतने वाले आर्य दुराक्रमणकारियों के रूप में ब्राह्मणों की व्याख्या करने वाली जाति की पैदाइश से संबंधित नस्लीय सिद्धांत को इस आंदोलन ने सामने लाया. इस ब्राह्मणवाद–विरोधी आंदोलन के दक्षिण पंथी रुझान ने यह तय किया कि उसे शिक्षा के क्षेत्र में, सरकारी नौकरियों में एवं विधायी संबंधी सभाओं में ब्राह्मणों के एकाधिकार का विरोध करने वाले संघर्ष, जिला बोर्ड में प्रतिनिधित्व हासिल करके उस पर नियंत्रण हासिल करने के संघर्ष तक सीमित होना चाहिए. जस्टिस पार्टी, ब्राह्मणवाद–विरोधी पार्टी, यूनियनिस्ट पार्टी (पंजाब) इसी रुझान से संबंधित थी. अन्य जगहों पर भी आर्य समाज, गुजरात में पाटीदार, राजपूत गुटों ने इस रुझान का प्रतिनिधित्व किया. बिहार में त्रिवेणी संघ भी तीन प्रमुख व पुरानी शूद्र जातियों – यादव, कुर्मी, कोयरी तक ही सीमित हुआ. इस रुझान ने दलित एवं अन्य उत्पीड़ित जातियों की आकांक्षाओं व आवश्यकताओं के प्रति सहानुभूति नहीं दिखाई.

उसी समय पश्चिम व दक्षिण भारत देश के बहुत से इलाकों में गैर ब्राह्मण जनता का सामंती उच्च वर्ग जो कि औपनिवेशिक शासन की सामाजिक बुनियाद थी, के साथ एवं सूदखोरों के साथ अंतरविरोध था. इन सामंती उच्च वर्गों व सूदखोरों में से अधिकांश लोग सबसे पीड़क जातियों खासकर ब्राह्मण जाति के ही थे. इन इलाकों की प्रशासनिक मशीनरी पर भी इन्हें एकाधिकार प्राप्त था. इसीलिए ब्राह्मणवाद–विरोधी आंदोलन के एक तबके ने जो ज्यादा रैडिकल, व्यापक आधार वाला एवं संपूर्ण जाति विरोधी रुख वाला था, सीढ़ीदार जाति व्यवस्था को उसके नियमों सहित पूर्ण रूप से तिरस्कृत

अध्याय–2

ब्रिटिश शासन का प्रभाव, जाति विरोधी आंदोलन वर्ग विभाजन एवं जाति व्यवस्था में हुए बदलाव

औपनिवेशिक शासन ने ब्राह्मणीय हिन्दू व्यवस्था एवं असमानताओं वाली जाति व्यवस्था को उल्लेखनीय बदलाव का शिकार बनाया, लेकिन उनमें मौलिक रूप से बदलाव नहीं किया. इतना ही नहीं परंपरागत स्थानीय आचार व्यवहारों को भुलाकर जाति व्यवस्था को न्याय व्यवस्था में समाविष्ठ करने के जरिए दरअसल उसने उसे नई सांसें दी. औपनिवेशिक शासकों द्वारा ब्रिटिश कानूनों के परिप्रेक्ष्य में शास्त्रों की व्याख्या करने ब्राह्मण पंडितों को ब्रिटिश न्यायमूर्तियों के सलाहकारों के रूप में नियुक्त किया गया था. 'अन्य जातियों के लिए संरक्षित हकों' के नाम पर उन्होंने अछूतों को मंदिर प्रवेश से इनकार किया था. जाति व्यवस्था की स्वायत्तता का सम्मान करने के नाम पर ब्रिटिश न्यायालयों ने जातीय हकों का अनुमोदन किया. जातीय पाबंदियों का उल्लंघन करने के खिलाफ अनुशासनात्मक कार्रवाईयां करने के अधिकार जो जातियों को हासिल था, को स्वीकार किया. संस्कृत के अध्ययन, संस्कृत ग्रंथों के अंग्रेजी में अनुवाद का अंग्रेजों ने प्रोत्साहन किया. उसके लिए आवश्यक आर्थिक मदद दी. उन्होंने आर्य नस्ल की यूरोपीय बुनियाद पर जोर देते हुए जाति व्यवस्था की नस्लीय स्वच्छता का प्रचार किया था.

जो भी हो, अपने शासन को संगठित करने के लिए एवं भारत देश में अपने शोषण को तेज करने के लिए 19वीं सदी में औपनिवेशिक शासन द्वारा लाए गए आर्थिक बदलावों ने ग्रामीण इलाकों के उत्पादन संबंधों को तीव्र रूप से प्रभावित किया. विभिन्न रूपों में नए वर्ग अस्तित्व में आए. औपनिवेशिक शासकों ने भूमि को माल बनाया. सभी जातियों के लोगों को अपने–अपने स्तर

के मुताबिक जमीन उपलब्ध होने, जमींदारी पद्धति एवं रैयतवारी पद्धति आदि कर वसूली की पद्धतियों के अमल में लाने, रेल्वे, बंदरगाह, राजमार्ग, जूट मिल, रक्षा संबंधी कार्य, औपनिवेशिक शिक्षा प्रणाली, साझा नागरिक व अपराध दण्ड संहिता, आचार संहिता आदि के अमल में लाने के जरिए उनके राज्य यंत्र ने जाति व्यवस्था को गहराई से प्रभावित किया. समाज में जाति व्यवस्था की भूमिका में कुछ बदलाव सहित जाति व्यवस्था विरोधी आंदोलनों के उत्पन्न होने एवं जाति व्यवस्था के ढीले पड़ने के लिए आवश्यक भौतिक परिस्थितियां कुछ हद तक निर्मित हुईं.

ब्रिटिश शासकों ने अपने औपनिवेशिक शासन के लिए समर्थन जुटाने, विशेषकर 1857 के महान प्रथम भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के बाद, 'बांटो और राज करो' नीति पर अमल किया था. मिशनरियों के जरिए निम्न जातियों के ईसाई धर्म में परिवर्तन को उन्होंने प्रोत्साहित किया. दूसरी तरफ निचली (उत्पीड़ित) जातियां मुख्य रूप से दलितों ने हिंदू धर्म के भेदभाव, छुआछूत जैसे अमानवीय दुराचारों को सहन नहीं कर पाने के कारण, इसाई धर्म में शामिल हो गए. 1901 से प्रारंभ जन गणना में लोगों की जातियों के विवरण भी दर्ज किए गए थे. अपनी–अपनी जातियों को पीड़क जातियों के रूप में दर्ज कराने एवं अपनी जातीय महासभाओं एवं जातीय पत्रिकाओं के जरिए विभिन्न जातियों के इलाकावार संगठित होने को इसने सुगम बनाया.

उत्तर भारत के कायस्थ एवं केरल के नायर जाति के समाज सुधारकों ने अपनी जातियों में मौजूद पुराने रीति रिवाजों को तिलांजलि देकर औपनिवेशिक शासन में उपलब्ध नये अवसरों के अनुरूप ढलने के लिए जातीय आचार व्यवहारों में बदलाव लाने की आवश्यकता पर जोर दिया था. पीड़ित जातियों में भी मलिन या नीच माने जाने वाले पेशों को छोड़ने एवं पीड़क जातियों के आचार–व्यवहारों को अपनाकर ऊंचा दर्जा पाने की कोशिश में संबंधित जातियों के पेटि बुर्जुआई तबकों ने अपने जातीय संगठनों को गोलबंद किया था. आखिर गैर ब्राह्णीय आंदोलनों, सुधारकों के दबाव से अंग्रेजों को तालाबों, कुंओं, शालाओं जैसे सार्वजनिक प्रदेशों, जो सरकारी निधियों से संचालित थे, को सभी जातियों एवं सभी वर्गों की पहुंच के दायरे में लाते हुए प्रस्ताव व कानून बनाना पड़ा. लेकिन उन पर अमल के लिए उन्होंने कुछ खास नहीं

किया.

अंग्रेजों ने उनके द्वारा लागू जमीन पर स्वामित्व की पद्धतियों में असली काश्तकारों के अनुल्लंघनीय अधिकारों को भुला दिया था. कई इलाकों में दलाल, गैर काश्तकार एवं परंपरागत तौर पर उत्पादन के एक ही भाग को अपने हिस्से में प्राप्त करने वाले लोग जमीन के पूर्ण मालिक बन गए. जमींदारी इलाकों के शूद्र किसान भूस्वामियों की दया पर आधारित जोतदार बन गए. अन्य इलाकों में एक ऐसे किसानों का वर्ग, जो जमीन का मालिक है, उभरकर आया. लेकिन इस वर्ग में भी बड़े किसानों को फायदा हुआ. जबकि असली काश्तकार, जोतदारों व बटाईदारों में तब्दील हो गए. वे शूद्र किसान धनी किसानों में उच्च तबके के रूप में और मध्यम किसानों में निम्न तबके के रूप में विभाजीत हो गए. तीव्र होते शोषण के साथ–साथ अकाल, अन्य संकट मिलकर तमाम खेतिहार जातियों के कर्ज पीड़ित किसान भूमिहीनों में तब्दील हो गए. दस्तकार कारीगरों का एक हिस्सा भी भूमिहीन मजदूर बन गए. 19वीं सदी में कई पिछड़ी व दलित जातियों में से अत्यंत ग्रामीण गरीब वर्ग, भूमिहीन या गरीब किसान वर्ग का उद्‌भव हुआ. इन पिछड़ी दलित जातियों में से औद्योगिक उत्पादन से जुड़े मजदूर वर्ग का भी आविर्भाव हुआ. इन जातियों का एक छोटा तबका छोटे ठेकेदारों, व्यापारियों के रूप में तब्दील हो गया और सामाजिक तौर पर उच्च स्तर में विकसित होकर भूमि पर मालिकाना हक हासिल करने के अवसर उपलब्ध हुए. शिक्षा के अवसर, सैनिक सेवाएं, बुनियादी ढांचा सहित जूट मिलों के कार्यों में एवं सरकारी मशीनरी में प्रवेश करने के अवसर उपलब्ध होने के साथ ही पिछड़ी व दलित जातियों में पेटि बुर्जुआ वर्ग भी विकसित हुआ. इस तरह गठित पेटि बुर्जुआ वर्ग ने यह चिह्नित किया कि सरकारी नौकरियों पर ब्राह्मणों का मौजूदा एकाधिकार उनके अवसरों के लिए अवरोध बना हुआ है. ब्राह्मण एवं अन्यान्य पीड़क जातियां उन्हें उपलब्ध परंपरागत शिक्षा एवं उनकी मजबूत सामाजिक व आर्थिक स्थिति के चलते कम समय में ही पश्चिमी शिक्षा हासिल करके प्रशासनिक मशीनरी में एवं न्याय व्यवस्था के अधिकांश हिस्से की नौकरियों पर कब्जा करने में सफल रहे. इस तरह पश्चिमी शिक्षा के प्रवेश के चलते ब्राह्मणों को औपनिवेशिक राज्य मशीनरी पर एकाधिकार हासिल करने का मौका मिला.

1960 के दशक के आर्थिक एवं राजनीतिक संकट ने अखिल भारतीय स्तर पर शासक वर्गों के बीच के अंतरविरोधों, अखिल भारतीय दलाल नौकरशाही पूंजीपति वर्ग एवं क्षेत्रीय दलाल बुर्जुआ वर्ग व सामंती तबकों के बीच के अंतरविरोधों के साथ–साथ देश के तमाम अंतरविरोधों के तीखा होने की राह बनाई. हरित क्रांति जैसी नीतियों एवं विशेष इलाकों के औद्योगीकरण की वजह से विभिन्न राज्यों में पूंजीवादी एवं सामंती/धनी किसान शक्तियां विकसित हुई. सरकारी संसाधनों में हिस्से की मांग/हिस्सा बढ़ाने की मांग करना बढ़ गया था. अखिल भारतीय दलाल नौकरशाही पूंजीपति वर्ग, जो संसाधनों को बांटने के लिए तैयार नहीं था, सत्ता को और केन्द्रित करने के लिए कोशिश की. नतीजतन 60 के दशक की आखिरी एवं 70 के दशक की शुरुआत में देश में राजनीतिक अस्थिरता व्याप्त हो गयी थी.

यह आर्थिक, राजनीतिक संकट उत्तर भारत देश में जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व में 'संपूर्ण क्रांति' के रूप में छिड़ गया था. यह आंदोलन मुख्य रूप से गुजरात, बिहार, उत्तर प्रदेश राज्यों को केन्द्र बनाकर उत्तरी भारत देश को हिला दिया था. इस आंदोलन के द्वारा नई उभरती पिछड़ी जातियों की पूंजीवादी सामंती/धनी किसान शक्तियां नई शोषक–शासक राजनीतिक पार्टियों के नेताओं के रूप में मंच पर आईं. दूसरी ओर इस राजनैतिक अस्थिरता ने उत्तरी भारत के राज्यों में राजनीतिक सत्ता में अपना हिस्सा पाने से इनकार की गई सामंती/पूंजीवादी शक्तियों के मजबूत होने में मदद दी. पश्चिमी उत्तर प्रदेश के जाट सामंती प्रतिनिधि चरणसिंह के नेतृत्व में उत्तर प्रदेश में गठित भारतीय लोक दल (बीएलडी) की सरकार जैसी गैर कांग्रेसी सरकारें गठित हुईं.

मध्यस्थ जातियों के पूंजीवादी सामंती तबकों, बड़े व्यापारियों ने विभिन्न क्षेत्रीय दलाल बुर्जुआ तबकों एवं अखिल भारतीय दलाल नौकरशाही पूंजीपति वर्ग के एक तबके की मदद से अपना स्थान मजबूत करके 1977 में जनता पार्टी की स्थापना की थी. लेकिन विभिन्न शासक वर्गीय गुटों की इस गठबंधन (जनता पार्टी) के भीतर जारी गुटबाजी के चलते वह ज्यादा समय तक टिक नहीं सकी. इससे अखिल भारतीय दलाल नौकरशाही पूंजीपति वर्ग, केन्द्रीकृत सत्ता एवं संसाधनों पर पकड़ का प्रतिनिधित्व करने वाली कांग्रेस (आई) 1980

ब्राह्मणवाद–विरोधी आंदोलन दलित हितों के लिए उपयोगी साबित नहीं होने के चलते एवं पीड़क जातियों के सुधारकों की सीमितताओं के कारण जाति व्यवस्था के तहत अत्यंत तीव्र उत्पीड़न के शिकार जातियों की हैसियत से दलितों ने अपने स्वयं के आंदोलन को विकसित किया. विशेषकर दक्षिण भारत में बीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध से दलितों ने अपनी जातियों के उपनामों को आदि–द्रविडों, आदि–आन्ध्रों, आदि–कन्नडिगों के रूप में बदल लिया था. स्वयं को पंचम कहलाए थे, तद्वारा यह कहने की कोशिश की कि विभिन्न इलाकों के असली मूलवासी वे ही थे. अलग से महासभाओं का आयोजन शुरू किया था. पंजाब के चमारों ने आर्य समाज, उसके शुद्धिकरण कार्यक्रम एवं वेदों के समर्थन के उसके व्यवहार से नाता तोड़कर आदि–धर्म आंदोलन की शुरुआत की थी. भक्ति आंदोलन के प्रवक्ता संत रोहिदास के नाम को उन्होंने पुनः उजागर किया. शुरुआत में इन संगठनों ने शिक्षा एवं संस्कृतीकरण पर जोर दिया था. लेकिन जल्द ही पीड़क जातियों के अनुकरण को छोड़कर सामाजिक समानता एवं राजनीतिक प्रतिनिधित्व के लिए संघर्ष करना एवं जातीय उत्पीड़न से संबंधित ठोस रूपों को खतम करने की मांग को लेकर आवाज उठाना शुरू किया था. परंपरागत रूप से ताड़ निकालने वाले केरल के यजवा जाति के लोगों ने श्री नारायण गुरू के नेतृत्व में एक आंदोलन का सफलतापूर्वक संचालन किया था. पहले यजवा स्नातक डॉक्टर पाल्पू के सहयोग से 1902–03 में उन्होंने 'श्री नारायण गुरू धर्म परिपालनायोगम' का गठन किए थे. पहले उच्च शिक्षा की आवश्यकता पर जोर देते हुए उन्होंने उस जाति को संगठित किए थे. मंदिर प्रवेश के लिए उन्होंने कोशिश की. 1924 का वैकाम सत्याग्रह केरल की जनता के प्रगतिशील तबकों के साथ–साथ यजवा जाति के लोगों के प्रयास का नतीजा था. 19वीं सदी की अंत में गुरु घासीदास के नेतृत्व में पंजाब और मध्यप्रदेश (विशेषकर आज के छत्तीसगढ़ का इलाका) राज्यों में सतनामीपंथ के नाम से ब्राह्मण–विरोधी स्वाभिमान आंदोलन चला था. चमार के नाम से जाने जाने वाले दलितों के एक बड़े तबके इस आंदोलन की सामाजिक बुनियाद था. सतनामीपंथ को लेने वाले दलित खुद को चमार के रूप में नहीं, बल्कि सतनामी के रूप से पुकारे हैं. उसी तरह इसी काल में उत्तरप्रदेश में जाति उन्मूलन के लक्ष्य से कबीरपंथ का स्वाभिमान आंदोलन भी

चलाया गया था.

दलित मुक्ति के लिए समर्पित
डॉक्टर बाबासाहेब आंबेडकर का जीवन

डॉक्टर भीमराव रामजी आंबेडकर (बी.आर. आंबेडकर) ने विपरित परिस्थितियों में अध्ययन करते हुए उच्च शिक्षा हासिल की। बचपण से ही जातीय उत्पीड़न और सामाजिक बहिष्कार और अत्याचार को झेलते हुए वे बड़े हुए। तत्कालीन सामाजिक परिस्थिति और खुद भूक्तभोगी रहने के कारण स्वाभाविक रूप से ही जाति उनके अध्ययन का विषय बना। उन्होंने भारत की जाति व्यवस्था पर प्रबंध लिखे। उन्होंने अर्थशास्त्र का भी गहन अध्ययन किया और प्रबंध लिखे। महिलाओं को समान हक देने के लिए वे सतत प्रयत्नशील रहे। वे केवल लिखने तक ही सिमित नहीं रहे, बल्कि अपने अध्ययन के व्दारा उन्होंने जाति के विश्लेषण और निमूर्लन के लिए बताए रास्ते को धरातल पर उतारने के लिए तमाम दलित जनता को संगठित करने आगे बढ़े। उन्होंने अपने पूर्व में जाति के निमूर्लन के लिए कार्य किए सुधारकों को गुरू के रूप में स्विकारा। वे कहते थे उनके तीन गुरु हैंः गौतम बुध्द, कबीर और ज्योतिबा फूले। महाराष्ट्र में आंबेडकर के नेतृत्व में दलित आंदोलन उभरा. उन्होंने दलितों के अंदर अस्मिता का अलख जगाया और सम्मान से जीने के लिए संघर्ष करना सिखाया। उन्होंने दलित मुक्ति की आशा के साथ दलितों के हितों के लिए जिन सिद्धांतों पर उन्होंने भरोसा किया था, उनके मुताबिक आजीवन प्रयास किया। आधुनिक भारत के इतिहास में वे एक समाज सुधारक, अर्थशास्त्री, राजनीतिज्ञ एवं भारत के संविधान के रचनाकार के ही रूप में विख्यात नहीं हुए थे बल्कि दलितों के स्वाभिमान का प्रतीक बन गए। वे एक सामाजिक क्रांतिकारी थे।

आंबेडकर का जीवन – राजनीतिक आचरण

भारत देश की जातियता की श्रेणी में सबसे निचली पायदान पर अतिशुद्र या दलित जातियाँ हैं। उन्हें जातीय उत्पीड़न की सबसे घिनौनी व अमानवीय प्रथा छुआछुत का सामना करना पड़ता। इन्हें अछूत कहा जाता। ये सामान्य ग्राम सेवक, खेत मजदूर थे। परंपरागत स्थाई पेशे के अभाव में तथा जातीय

ही हैं. सरकारों द्वारा एससी/एसटी लोगों को उपलब्ध कराई गई सुविधाएं व आरक्षण उनकी जिंदगियों में कोई बुनियादी बदलाव नहीं ला सके हैं. लेकिन एक छोटे तबके आर्थिक रूप से मजबूत होकर मध्यम वर्ग के रूप में तब्दील हो गया.

असल में दलितों की समस्या प्रधानतया भूमि समस्या ही है, उसी समय वह जाति की समस्या, अस्पृश्यता की समस्या, बहिष्कृत बस्तियों की समस्या, स्वाभिमान की समस्या एवं राजसत्ता की समस्या भी है. इसलिए यहां दलित समस्या को सिर्फ भूमि समस्या तक सीमित करके बाकी की परवाह नहीं करने से या बाकी समस्याओं तक सीमित रखके भूमि समस्या की अनदेखी करने से भी उस समस्या को पूर्ण रूप से समझ नहीं सकते हैं. इस कारण ही दलित समस्या के हल के लिए एक साथ भूमि समस्या, रोजगार समस्या एवं बाकी सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक समस्याओं को भी अपनाना चाहिए. जोतने वाले को जमीन के नारे के साथ क्रृषि क्रांति जो कि नव जनवादी क्रांति की धुरी है, को सफल बनाने के जरिए ही यानी देश में मौजूद शोषण मूलक सामाजिक संबंधों को ध्वस्त करने, अर्ध औपनिवेशिक, अर्ध सामंती सामाजिक बुनियाद को उखाड़ फेंककर दलित समस्या की पैदाइश एवं उसके जारी रहने के लिए मूलतः कारण बने सामंतवाद एवं साम्राज्यवाद को ध्वस्त करने के जरिए दलित समस्या के स्थाई हल का रास्ता साफ हो जाएगा.

गांवों में अस्पृश्यता जारी ही है. हालांकि शहरों में खुले तौर पर अस्पृश्यता का पालन काफी हद तक नहीं दिखता है, लेकिन उनके प्रति भेदभाव व पक्षपात के रूप में यह व्यक्त हो ही रही है. बस्तियों में पानी के नलों के पास, किराए के घरों के मामले में, कुछ सार्वजनिक स्थलों सहित, विभिन्न कार्यस्थलों में कई रूपों में यह जातिगत भेदभाव जारी है. अत्यंत फायदेमंद पेशे पीड़क जातियों के लोगों के एकाधिकार में हैं.

भाषा आधारित राज्यों के गठन से क्षेत्रीय स्तर पर विशेषकर पश्चिम, दक्षिण भारत में मध्यस्त जातियों के उच्च स्तरों से संबंधित छोटे सेक्शनों को अधिकार हासिल करने में मदद मिली. लेकिन उत्तर भारत के राज्यों में आज भी सरकारी मशीनरी एवं सरकारें काफी हद तक पीड़क जातियों के ही अध ीन है.

एवं निम्न जातियों के हैं. इसलिए शोषण का शिकार होने वाली उत्पीड़ित जनता में जातिगत विभाजन बहुत ज्यादा है. आज जाति एवं वर्ग के बीच का संबंध इस तरह जटिल है.

सरकारी प्रशासनिक मशीनरी एवं सार्वजनिक क्षेत्र के विकसित होने के साथ ही उन क्षेत्रों में भी जातिगत भेदभाव कुछेक बदलावों के साथ जारी है. औद्योगिक संस्थानों के प्रबंधन में प्रशासनिक तंत्र के उच्च स्थानों पर पीड़क जातियां हावी हैं. दलित सफाई कर्मियों (स्वीपरों), चपरासियों एवं अन्यान्य चाकरियों – चतुर्थ श्रेणी नौकरियों में हैं. दलित प्रधानतया असंगठित क्षेत्र के मजदूरों के रूप में (अपेक्षाकृत अकुशल, कम वेतनवाले और बिना गारंटी की नौकरियों में, संविदा श्रमिकों के रूप में, छोटे औद्योगिक क्षेत्रों में) हैं. आंदोलनों के दबाव के चलते विभिन्न सरकारें राज्य एवं केन्द्र के प्रशासनिक तंत्रों में आरक्षित स्थानों, विशेषकर क्लर्क श्रेणी, निचले स्तर की प्रबंधकीय श्रेणी की नौकरियों, की भर्ती की गई. फिर भी दलितों एवं अन्य जातियों के बीच सामाजिक अंतर में कोई बड़ा फर्क नहीं है. आरक्षण नीति के कारण आज समूचे देश की एससी, एसटी आबादी में से केन्द्र–राज्य सरकारों की नौकरियों में काम करने वालों की संख्या उन्हें आबंटित आरक्षण के कोटे से बहुत कम है. यानी इनमें से 95 प्रतिशत तक के लोगों को स्थाई व गारंटी वाली आजीविका नहीं है. गांवों या शहरों के असंख्य झोंपड़पट्टियों में देखे तो यह वास्तविक जीवन सच्चाई सामने आती है कि दलित दरिद्रता एवं अशिक्षा/नाममात्र की पढ़ाई के साथ दूभर जिंदगी बिता रहे हैं.

इन जातियों के अधिकांश लोग खेत मजदूरों के रूप में जिंदगी के बोझ को घसीटने वाले ही हैं. हमेशा भूस्वामियों के शोषण व जुल्म का शिकार होने वाले ही हैं. शासकों के द्वारा अमल में लाए गए भूमि सुधारों में एक प्रतिशत से भी कम भूमि आबंटित हुई. जबकि इसमें से दलितों को हासिल खेती योग्य भूमि बहुत कम है. कुछेक जगहों पर पट्टा मिलने के बावजूद भूस्वामियों की नौकरशाही के चलते उनके हाथ में जमीनें नहीं आईं, जहां कहीं आई भी तो खेती के लिए पर्याप्त लागत, स्रोत के अभाव में उसे सस्ते में बेचने या गिरवी रखकर आखिर कर्ज न चुकाने की एवज में छोड़ दिया गया है. ग्रामीण बेरोजगारों में शहरों के लिए पलायन कर जाने वालों में अत्यधिक लोग दलित

हिंसा और अत्याचार की वजह से दलित जातियों का गाँवों से निरंतर पलायन होते रहा।

वे वहां जूट मिलों, रेल्वे, बंदरगाहों, सेना, रक्षा संबंधी कार्य एवं छोटे व्यापार आदि क्षेत्रों में आजीविका हासिल करते थे. इन्हें वहां अंग्रेजों की सैनिक व ईसाई मिशनरियों की शालाओं द्वारा शिक्षा के अवसर उपलब्ध हुए. इनसे दलितों के एक छोटे तबके पेटि बुर्जुआ वर्ग के रूप में विकसित हुआ. एक उल्लेखनीय तबका मजदूर वर्ग बन गया. महाराष्ट्र में दलितों में सबसे ज्यादा संख्या महार जाति की है। वे बड़े पैमाने पर शहरों में पलायन हुए और औद्योगिक मजदूर बने।

ब्रिटिश सेना में सूबेदार मेजर रैंक वाले की संतान आंबेडकर उस जाति के सबसे पहले स्नातक थे. उन्होंने 1906 में अमेरिका के कोलंबिया विश्वविद्यालय में डॉक्टरेट की उपाधि हासिल की थी. उसके बाद बरोड़ा महाराजा के यहां एवं कोलेज के प्रोफेसर के रूप में काम किए. फिर इंग्लैण्ड जाकर लंदन स्कूल ऑफ इकॉनॉमिक्स में आर्थिक मामलों पर एक प्रबंध लिखे. लंदन विश्वविद्यालय में वकालत की पढ़ाई पूरी करके 1923 में भारत देश वापस आए थे.

1920 के उत्तरार्द्ध में अछूतों के मानवाधिकारों के लिए, जाति निर्मूलन के लिए, अन्यों की तरह दलितों के लिए भी समान अधिकार हासिल करने के लिए, महिलाओं को समान अधिकारों के लिए एवं मजदूरों के अधिकारों के लिए किए गए कई संघर्षों में आंबेडकर सक्रिय रूप से शामिल होकर उनका नेतृत्व किया था. इन संघर्षों में प्रमुख थे, कोंकण इलाके के महाड में गांव के तालाब का पानी सभी जातियों द्वारा इस्तेमाल करने के लिए 1927 में आयोजित महाड सत्याग्रह, बड़ी महासभा, मनुस्मृति का दहन, 1928– 1930 के बीच में अमरावती एवं नासिक में मंदिर प्रवेश के लिए किए गए संघर्ष. इनमें नासिक संघर्ष 5 साल तक जारी रहा. इन जन संघर्षों ने दलितों के जुझारू युवा तबके को प्रेरित करके सभी दलितों को सामूहिक चेतना से लैस किया. इस संघर्ष ने दलितों को पशूवत देखने वाली समाज व्यवस्था के नियमों और परंपराओं को धुत्कारने का साहस पैदा किया और दलितों की अस्मिता को जागृत किया तथा समानता के सिध्दान्तों को एजेंडे पर ले आया।

इस पूरी कालावधि में डॉ. आंबेडकर ने ब्राह्मणवाद और पूंजीवाद को

जनता के दो दुश्मन है ऐसा कहते आए थे, बावजूद व्यवहार में वे ब्राह्मणवाद को प्रधान दुश्मन के रूप में लेकर काम किए थे. इन दोनों के खिलाफ एवं प्रतिक्रियावादी जाति व्यवस्था के खिलाफ कई सामाजिक आंदोलनों को और मजदूर आंदोलनों को संचालित करके सामाजिक और मजदूर आंदोलनकारी के रूप में डॉ. आंबेडकर ने एक मुख्य भूमिका निभाई.

उसके बाद उन्होंने जाति के सवाल पर सामाजिक सुधारों के लिए, जाती निर्मुलन के लिए कोशिशें करते हुए ही प्रधानतया राजनीतिक गतिविधियों को सक्रिय रूप से शुरू किया था.

1936 में आंबेडकर ने इंडिपेंडेण्ट लेबर पार्टी (आईएलपी) की स्थापना की थी. जिसका झंडा लाल था और उसके उपरी बायें कोने मे 11 स्टार थे जो तत्कालीन भारत के 11 प्रोव्हीन्स को दर्शाते थे। आईएलपी ने मजदूरों के हकों के लिए संघर्ष किए। कम्युनिस्टों एवं समाजवादीयों के साथ मिलकर कपड़े मिल मजदूरों के हड़ताल किए खोती प्रथा (कोंकण के भूस्वामी) के विरोध में आंदोलन किए. आंबेडकर ने जाति–विरोधी आंदोलन में महिलाओं को अनगिनत संख्या में गोलबंद की. उन्होंने जाति सहित लिंग उत्पीड़न का केंद्र हिंदूवाद के मौलिक नियमों पर न सिर्फ सवाल उठाया, बल्कि महिलाओं से संबंधित कुछ समस्याओं पर आंदोलन किए.

आंबेडकर के क्रियाकलापों का अधिकांश हिस्सा संघर्षों व जन गोलबंदी के लिए ही खर्च होने के बावजूद, ब्रिटिश प्रशासनिक मशीनरी से दलितों के लिए सुविधाएं व रियायतें हासिल करने के लिए उन्होंने कोशिशें की. दलितों के लिए विशेष निर्वाचन क्षेत्र, नौकरियों में आरक्षण एवं छात्रवृत्ति जैसी मांगें मुख्यतया उभरते दलित एवं मध्यम वर्ग की उन्नति एवं विकास के लिए मददगार थी. इस क्रम में ही उन्होंने 'स्वतंत्र' भारत में वंचित वर्गो के हकों को सुरक्षित रखने के उद्देश से उनका प्रतिनिधी बनकर अधिकार स्थापित करने का निर्णय किए. क्योंकि गांधी खुदको ही कमजोर वर्गो का प्रतिनिधी बताकर नई व्यवस्था मे वंचित वर्गो के हकों के साथ छल कपट कर रहे थे। ऐसी परिस्थितियों में 1928 में साईमन कमिशन में, 1930 एवं 1931 में आयोजित गोलमेज सम्मेलनों में कमजोर वर्गों के प्रतिनिधि के रूप में आंबेडकर शामिल हुए थे.

को जारी रखना, विभिन्न सुधारों पर अमल करना, दुनिया के आर्थिक, राजनीतिक व सामाजिक बदलावों का हमारे देश पर असर पड़ना, सामंती संबंध कुछ हद तक कमजोर होना, पूंजीवादी संबंधों का क्रमशः बढ़ना आदि कारणों के चलते ये बदलाव संभव हुए हैं. ग्रामीण इलाकों के बदलाव अत्यंत महत्व रखते हैं. हमें यह स्पष्ट हो रहा है कि देश के अत्यधिक इलाकों में जाति एवं वर्ग के बीच का नजदीकी संबंध कम हुआ है.

पुरानी पीड़क जातियों के जमींदारों व अन्य सामंती भूस्वामियों की जगह पर एक जमाने में जमींदारों के पास रहने वाले बड़े जागीरदार, भू मालिक बड़े किसान व छोटे भूस्वामी काबिज हुए हैं. परंपरागत तौर पर खेती करनेवाली जातियों का एक छोटा तबका भूस्वामियों व धनी किसानों में तब्दील हुआ. मध्यम वर्ग, गरीब व भूमिहीन किसानों में इन मध्यस्थ जातियों के लोग बड़ी संख्या में हैं. मध्यस्थ जातियों के निचले तबके के दस्तकार कारीगरों की जातियां मुख्यतः मध्यमवर्गीय या गरीब, भूमिहीन किसान हैं. जबकि इनमें से कुछ अपने परंपरागत पेशों को जारी रखे हुए हैं. इसलिए ग्रामीण इलाकों के प्रधान शोषक वर्ग में आज एक समय की पीड़क जातियों– ब्राह्मण, राजपूत, भूमिहार– से संबंधित लोगों के अलावा पाटीदार, मराठा, जाठ, यादव, वेल्लाल, ओक्काळिगा, लिंगायत, रेड्डी, कम्मा एवं नायर आदि कई पीड़क जातियों के ज्यादातर लोगों के साथ–साथ पीड़क वर्गों में तब्दील कुछ अन्य जातियों के लोग भी हैं. ग्रामीण इलाके में करीबन 20 प्रतिशत परिवार वाले मध्य वर्गीय किसान खासकर खेती करने वाले प्रधान जातियों एवं अन्य दस्तकार जातियों से संबंधित हैं. दलितों का एक छोटा विभाग भी मध्यम किसानों के रूप में हैं. वर्ग चेतना के अभाव के चलते मध्यम वर्गीय किसान गांव के पीड़क वर्गों के साथ अपने अंतरविरोधों के बावजूद जाति के रिश्तों के कारण साधारणतया ये अपनी–अपनी जातियों के भूस्वामियों के साथ रह रहे हैं.

गरीब व भूमिहीन किसान ग्रामीण परिवारों का 60 प्रतिशत हैं. इनमें जाति विभाजन बहुत ज्यादा है. छोटे दस्तकारों, मुसलमानों एवं सेवक जातियां बड़ी संख्या में इन गरीब व भूमिहीन किसानों में हैं. इस वर्ग में दलितों, आदिवासियों के परिवार भी बड़ी संख्या में हैं. खेत मजदूरों के परिवारों में से 37 प्रतिशत दलितों व 10 प्रतिशत आदिवासियों के हैं. जबकि बाकी आधा खेतिहर जातियों

तरफ राज्ययंत्र की मदद से संघ परिवार की शक्तियां दलित, आदिवासी, धार्मिक अल्पसंख्यक, धर्म निरपेक्ष, जनवादी एवं क्रांतिकारी शक्तियों पर सैद्धांतिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक व भौतिक हमलें जारी रखी हुई हैं. इन फासीवादी सरकारों व ताकतों के साथ समझौताविहीन संघर्ष करने वाली क्रांतिकारी ाक्तियों, अन्य जुझारू शक्तियों पर अत्यंत क्रूर दमन अमल कर रही है. ये फासीवादी ताकतें, अन्य आंदोलनों की ताकतों को लालच देकर या डरा धमकाकर अपने वशीभूत करके देश की जनता को गुलामी में धकेलकर उन्हें बेरोकटोक शोषण व उत्पीड़न का शिकार बनाने देख रहे हैं. इस परिप्रेक्ष्य में ही मोदी की नेतृत्ववाली भाजपा सरकार आंबेडकर को आसमान तक ऊंचा उठाते हुए उनके 125वीं जयंती समारोह का शानदार ढंग से आयोजन किया। सत्ताधारी वर्ग द्वारा उनके हित के लिए बनाए गए इस आंबेडकर के प्रतिक को हमें बेनकाब करना चाहिए और आबेंडकर को व्यापक जनवादी संघर्ष के हथियार के रूप में लेने के लिए जरूरी है कि उन्हें सत्ताध ारी वर्ग के दुर्ग से बाहर निकालकर, उनके सही प्रतीक के रूप में देखना है जिसके लिए उनका जीवन अर्पित था।

अध्याय–3

ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के बाद के काल के जाति व्यवस्था में बदलाव

ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के बाद के समय में देश के राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक व सांस्कृतिक क्षेत्रों में हुए उल्लेखनीय बदलावों के तहत जातियों की रूपरेखाएं भी उल्लेखनीय बदलाव का शिकार हुई हैं. महान तेलंगाना किसान सशस्त्र संघर्ष सहित कई जन संघर्षों का संचालित होना, महान नक्सलबाड़ी सशस्त्र किसान संघर्ष से लेकर देश में नव जनवादी संघर्ष का जारी रहना, कई राज्यों में जमींदारी प्रथा को रद्द करने वाले कानून पर अमल करना, सीमित भूमि सुधारों पर अमल करना, कुछ राज्यों में हरित क्रांति

दूसरा विश्व युद्ध जब छिड़ गया था, आंबेडकर ने फासीवाद के खिलाफ मित्र रा ट्रों (ब्रिटन, अमेरिका आदि देश) की निशर्त मदद दी थी. फरवरी, 1941 में उन्होंने वायसराय से भी मुलाकात करके ब्रिटिश सेना में दलितों को शामिल करने की मांग की थी. वायसराय द्वारा उनकी मांग स्वीकार किए जाने पर उन्होंने स्वयं विभिन्न इलाकों में जाकर दलित युवाओं को ब्रिटिश सेना में भर्ती होने प्रोत्साहित किया था.

उस वक्त वंचित वर्गो के लिए नौकरी प्राप्त करना आर्थिक, सामाजिक और उन्नती के दृष्टी से बहुत आवश्यक था, क्योंकि ब्राम्हणवादीयों ने यह कहकर कि 'महार या अस्पृश्य लड़ाकू जमात नही है' अतः उन्हे सेना में भर्ती नही करना ऐसी शर्त भी अंग्रेजो से मनवा ली थी और अंग्रेजो ने दलितों को सेना मे भर्ती करना बंद कर दिया था। विश्वयुध्द के समय वह मौका आया जिसको आंबेडकर ने भाँपकर यह भर्ती फिर चालू करवा दी और दलितों को एक आर्थिक स्त्रोत उपलब्ध करवाया।

आंबेडकर जब वे जुलाई, 1941 में ब्रिटिश इंडिया राष्ट्रीय प्रतिरक्षा परिषद के सदस्य एवं जून, 1942 में वायसराय कैबिनेट में श्रम मंत्री के रूप में नियुक्त हुए थे. उसी समय में केन्द्रीय मंत्री के रूप में रहते हुए उन्होंने देश में कुछ श्रमिक कल्याणकारी कानूनों के बनने में मदद की. उसी तरह इस कालावधि में भी दलित–मध्यम वर्ग की सुविधाओं के लिए कोशिशे करते हुए कमजोर वर्गों के लिए सरकारी नौकरियों में 8.33 प्रतिशत आरक्षण एवं विदेशों में भारतीयों की शिक्षा के लिए छात्र वृत्तियां वे हासिल कर सके थे.

अंग्रेजों के चले जाने के बाद गठित होने वाले नई संवैधानिक व्यवस्था में कुछ हद तक जगह प्राप्त करने के उद्देश्य से इस दौरान आंबेडकर ने अपनी दिशा तय की थी. इसे ध्यान में रखकर 1942 में इंडिपेंडेण्ट लेबर पार्टी को रद्द करके दलित प्रतिनिधि के रूप में अंग्रेजों के साथ सलाह मशवरा करने के लिए शेड्यूल्ड कॉस्ट फेडरेशन (एससीएफ) का गठन किए थे. बाद में 'स्वतंत्र' भारत के नेहरु के मंत्रीमंडल मे कानून मंत्री बने। युद्ध के बाद भारत के दलाल पूंजीपति व सामंती वर्गों की सत्ता के संविधान के मसौदा कमेटी के चैयरमेन बनना स्वीकार कर उन्होंने भारत के संविधान की मौलिक रचना में प्रधान भूमिका निभाई. संविधान समिती मे जाना स्विकारना एक ऐसा

समय था जब उनको लग रहा था की उनके जीवन में रहते हुए दलितों के लिए कुछ न कुछ तरतुद करना जरुरी है। उनकी सेहत भी खराब हो रही थी। उनको लग रहा था कि उनके व्दारा शूरु किए आंदोलन की परिणिती किसी निर्णयात्मक ठोस उपलब्धी के बिना व्यर्थ नहीं जाना चाहिए, इसलिए जब उनको संविधान लिखने का मौका आया तो उसे उन्होंने स्विकार कर दलितों और आदिवासीयों के लिए कुछ प्रावधान किए ताकि कल लोगों को अपने अधिकार के लिए लड़ते वक्त एक अधिकृतता (लेजीटीमसी) प्राप्त हो। फिर भी जब उन्होंने यह कार्य पूरा किया और मात्र उसके अमंल के तीन साल बाद ही उन्होंने कहा की, यह संविधान दलितों को समानता नही ंदे सकता, मेरा कॉंग्रेस व्दारा इस्तेमाल हुआ है। इसे जलाने वाला पहला शक्स मैं ही रहुंगा।

1947 के बाद नेहरू के मंत्रि मंडल में आंबेडकर न्यायशाखा मंत्री बन गए. इस काल में वेभारतीय सेना द्वारा तेलंगाना के सशस्त्र जन संघर्ष पर अमल किए गए अमानवीय दमन के बारे में मौन रहे थे. 1951 में हिन्दू कोड बिल का अनुमोदन कराने की बात पर अड़े हुए आंबेडकर का विरोध करते हुए, उस बिल का विरोध करने वाली प्रतिक्रियावादी ब्राह्मणीय सामंती शक्तियों के पक्ष में नेहरू के खड़े होने के चलते उसके विरोध स्वरूप आंबेडकर ने नेहरू मंत्रिमंडल से इस्तीफा दिया था.

अपने जीवनकाल में हिन्दू धर्म पर एवं जाति पर आंबेडकर द्वारा किए गए शोध कार्य एवं विश्लेषण काफी महत्वपूर्ण हैं. इन विषयों पर उन्होंने कई सैद्धांतिक रचनाएं की. लेकिन उन्होंने जाति की पैदाइश को लेकर सही निष्कर्ष नहीं निकाल सके. उसी तरह आंबेडकर ने जाति उन्मूलन के हल को शोंषणमूलक सामाजिक संबंधों को ध्वस्त करने की बजाए हिन्दू धर्म से बौद्ध धर्म में धर्मांतरण के जरिए हासिल करने की कोशिश की. फलस्वरूप अपने निधन के कुछ समय पहले 1956 में उन्होंने बौद्ध धर्म स्वीकार करके दलितों को बौद्ध धर्म की ओर मोड़ दिया. अपने जीवन की आखिरी समय में वे गंभीर अस्वस्थता का शिकार हुए. इस समय में औरंगाबाद एवं मुम्बई में महा विद्यालयों का निर्माण जैसे कार्यक्रमों को अपनाने के साथ ही वे कुछ सुधार कार्यक्रमों तक सीमित होते आए. इस समय में ही उन्होंने संयुक्त महाराष्ट्र आंदोलन का समर्थन किया था.

आखिर, आंबेडकर की बुर्जुआ उदारवादी सोच के चलते राज्ययंत्र केस्वाभाव के बारे में उनके अंदर गलत समझ बनी थी. इस बुर्जुआ सिद्धांत कि राज्यसत्ता तटस्थ है, पर विश्वास करते हुए उन्होंने उसे एक दमनकारी साधन के रूप में एवं उसके वर्ग स्वभाव को चिह्नित करने से इनकार किया. इसके चलते वे यह सोचते थे कि कानूनों में बदलाव एवं संवैधानिक सुधारों के जरिए राज्ययंत्र के चरित्र को बदल सकते हैं. हालांकि 'स्वेच्छ, समानता, भाईचारा', इन बुर्जुआ जनवादी उसूलों से प्रेरणा हासिल करने के बावजूद बुर्जुआ जनवाद के मूलभूत चरित्र – तानाशाही चरित्र को वे चिह्नित नहीं कर सके. विशेषकर साम्राज्यवाद एवं उसके ताबेदार सामंतवादी, दलाल नौकरशाही पूंजीपति वर्ग के राज्ययंत्र के प्रतिक्रियावादी चरित्र को वे चिह्नित नहीं कर सके. नतीजतन वे सामाजिक बदलाव लाने के लिए प्रधानतया कानूनों, कोर्टों, संसद व संविधान पर ही निर्भर रहे.

केन्द्र में सत्तारूढ़ ब्राह्मणीय हिन्दुत्व फासीवादी भाजपा के साथ–साथ शासक वर्गीय व संशोधनवादी पार्टियां आंबेडकर के प्रति दलितों एवं अन्यान्य उत्पीड़ित जातियों की जनता में मौजूद असीमित मान्यता को ध्यान में रखकर अपने स्वार्थ हित साधने के लिए उन्हें भारत के संविधान के निर्माता, संसदीय जनवाद के प्रदाता के रूप में एवं विचारधारा के तौर पर उन्हें हिंसा व क्रांति के विरोधी के रूप में अविराम प्रचारित कर रहे हैं. ये तमाम पार्टियां एक से बढ़कर एक आंबेडकर के कथन के रूप में यह प्रचारित कर रही हैं कि क्रमिक बदलावों व जनवादी तौर तरीकों के जरिए दलितों को अपने जीवन सुधार के लिए संयम के साथ कोशिश करनी चाहिए. इस तरह तमाम शोषक वर्गीय पार्टियां आंबेडकर के नाम का इस्तेमाल करते हुए दलितों को बुर्जुआ, पेटि बुर्जुआ सुधारों तक सीमित रखते हुए जुझारू वर्ग संघर्षों से उन्हें दूर करने के लिए एवं नव जनवादी क्रांति में संगठित होने से रोकने के लिए गंभीर प्रयास कर रही हैं. देश में 1947 के बाद, अभूतपूर्व स्तर पर ब्राह्मणीय हिंदुत्व फासीवादी संघ परिवार के एजण्डे के अनुरूप मोदी सरकार राज्ययंत्र एवं ब्राह्मणीय हिन्दुत्व फासीवादी जाति दुरहंकारी शक्तियों का फासिजीकरण कर रही है. एक तरफ मोदी सरकार के साथ–साथ विभिन्न राज्य सरकारें क्रांतिकारी आंदोलन पर चौतरफे हमले को तेजी से जारी रखी हुई हैं तो दूसरी

जिससे 'जाति उन्मूलन' से संबंधित सामाजिक और आर्थिक बुनियाद को महत्व नहीं दिए. इस सवाल पर उन्होंने यह समझदारी को सामने रखा कि धर्मशास्त्रों को मान्य श्रध्दाओं का स्वाभाविक परिणाम याने जाति है. जिस धर्मभावनाओं पर जातिभेद आधारित है, वह धर्मभावना नष्ट करना यह जातिभेद नष्ट करने का मार्ग है. इस तरह जाति के उद्‌भव के लिए भारतीय समाज के प्राचीन उत्पादन संबंध कारण नहीं बल्कि हिंदू धर्म है, ऐसी गलत समझदारी सामने लाए. इसके फलस्वरूप उन्होंने यह आशा की कि सामाजिक व्यवस्था में बदलाव की बजाए, हिन्दू धर्म को सुधारने के जरिए जाति का उन्मूलन कर सकते हैं. इसी कारण से वेदों को रद्द करने, तमाम हिन्दुओं के लिए मान्य एकमात्र मानक हिन्दू धार्मिक ग्रंथ बनाने, सभी जातियों के लिए लागू होने के हिसाब से परीक्षाएं आयोजित करके तद्वारा धर्मगुरुओं की नियुक्ति करने के कानूनों को प्रस्तावित किए. उन्होंने यह माना कि अंतरवर्णीय विवाह ही जाति उन्मूलन का अंतिम हल है. इस तरह उन्होंने यह भ्रम प्रचारित किया कि मनु य की सोच–विचारों में बदलाव के जरिए ही जाति व्यवस्था रद्द हो सकती हैहालांकि अंतरजातीय विवाहों को निरंतर प्रोत्साहित करने की जरूरत है, लेकिन उन्होंने यह नहीं समझा कि जाति की सामाजिक व आर्थिक बुनियाद को ध्वस्त किए बगैर जाति व्यवस्था के उन्मूलन में वे सिर्फ आंशिक रूप से ही मदद करती हैं. वे यह नहीं बता सके कि भारत में इस्लाम, ईसाई, सिक्ख धर्मों, आखिर बौद्ध धर्म में भी अलग–अलग रूपों में जाति क्यों मौजूद हैइसका जवाब उनके द्वारा प्रस्तावित हिन्दू धर्म का सुधार या बाद में उनका धर्मांतरण भी नहीं दे सका. इसलिए अंततः उन्होंने बौद्ध धर्म में अपना जो धर्मांतरण किया था, वह सहज ही जाति व्यवस्था से मुक्ति का मार्ग दिखा नहीं सका.

इसके अलावा जातीय सांप्रदायिकवादियों के खिलाफ उनके द्वारा अपनाए गए संघर्ष में ब्रिटिश प्रशासनिक मशीनरी पर उल्लेखनीय स्तर पर उन्हें निर्भर बनाया. उन्होंने यह माना कि चूंकि अंग्रेज पश्चिमी ईसाई धर्मावलंबी हैं इसलिए वे हिन्दू जाति सिद्धांत के खिलाफ रहेंगे. वे यह देखने में आचरण में विफल हो गए थे कि हमारे देश में ब्रिटिश साम्राज्यवादी, सामंती सनातन ताकतों पर आधारित होकर अपने शोषण व दमनकारी नीतियों को जारी रखे हुए थे.

आंबेडकर के प्रति हमारा राजनीतिक आकलन

आंबेडकर ने जातीय सीढ़ी में सबसे नीचे रहने वाले न केवल दलित जनता के समानता के लिए जुझते रहे बल्कि मजदूरों और महिलाओं के लिए भी उन्होंने संघर्ष संचालित किए। उनके दृष्टिकोण में समानता, स्वतंत्रता और भाईचारा को एकसाथ गुंफा हुआ समाज और भारत था। साम्राज्यवाद के बारे में उनकी समज थी कि जब तक जमींदारों, मिल मालिकों और सूदखोरों जैसे देश के भीतर मौजूद साम्राज्यवाद के मित्रों के खिलाफ संघर्ष किए बगैर साम्राज्यवाद के खिलाफ कोई असरदार युध्द लड़ा जाना संभव नहीं। उन्होंने रणनीतिक तौर पर औपनिवेशिक शासन के बरअक्स तटस्थता बनाई रखी। उनके अनुसार साधनहिन दलितों के लिए यह संभव नही था कि सभी ताकतवर दुश्मनों के खिलाफ एक साथ लड़ पाए। काँग्रेस को वे बुनियादी तौर पर जमींदारो और शहरी पूंजीपतियों का प्रतिनिधि समजते थे. उनके साम्राज्यवाद के खिलाफ युध्द माने जाने पर सवालिया निशान लगाते थे। उन्होंने जाति व्यवस्था को हिंदू साम्राज्यवाद के रूप में आरोपित किया जो ब्रिटीश साम्राज्यवाद के तुलना में दलितों के लिए निश्चित ही दुष्ट था।

आंबेडकर सही अर्थ में वंचित वर्गों के प्रतिनिधि थे। उन्होंने तमाम अस्पृश्य, उत्पीड़ित जातियों, दबे–कुचले लोगों और महिलाओं को एक वर्ग के रूप में संबोधित किया था। वे सभी दबे कुचले लोगों को 'डिप्रेस्ड क्लास' (वंचित वर्ग या दबे कुचले लोगों का वर्ग) कहते थे और मराठी में 'दलित' कहकर संबोधित करते थे। जाति व्यवस्था को वर्गिय दृष्टी से संगठित होकर ही तोड़ा जा सकता है, यह उनके डिप्रेस्ड क्लास की संकल्पना में था। हालांकि उनका इन समूह को वर्ग के रूप में संकल्पित करना मार्क्स के वर्ग संकल्पना से अलग है। उन्होंने ब्राह्मणवाद और पूँजीवाद यह भारत की शोषित जनता के दो दुश्मन है ऐसा बार–बार कहा। उनके नेतृत्व में जन गोलबंदियों एवं जनांदोलनों में लाखों की संख्या में यह वंचित वर्ग शामिल हुए थे। उनके द्वारा संचालित आंदोलन शुरुआत में सामाजिक एवं मानवाधिकारों के लिए, आत्मसम्मान के लिए थे, लेकिन बाद में दलितों, किसानों एवं मजदूरों और महिलाओं के जनवादी अधिकारों के लिए भी वो आन्दोलन हुए थे। यह सामंतवाद विरोधी संघर्षों के मुख्य हिस्से के रूप में संचालित कई जाति विरोधी

संघर्षों का उन्होंने नेतृत्व किया। उस तरह वे और उनके नेतृत्व में जारी आंदोलन, जनवादी शक्तियों तथा आंदोलनों का एक मुख्य हिस्सा थे.

आंबेडकर ने प्रधानतया दलितों के हकों को हासिल करने और उनका कल्याण के लिए अपना जीवन को समर्पित किए। लेकिन दलितों के अधिकारों एवं उनके कल्याण के लिए उन्होंने मुख्यतः संसदीय जनवाद का दामन थाम लिया था. दरअसल यह रुख उन्हें जुझारू संघर्षों की राह से भटकाकर, उनमें संसदीय व्यवस्था के प्रति भ्रम पैदा किया. दूसरी तरफ उनकी सेवाएं 1941 के बाद की अवस्था में अंग्रेजी साम्राज्यवादियों, 1947 की बाद की अवस्था में दलाल नौकरशाही पूंजीपति–सामंती वर्गों के लिए इस्तेमाल हुई.

कुल मिलाकर देखा जाए, तो आंबेडकर ने जाति निर्मूलन को अपना जीवन लक्ष्य बनाकर यथासंभव हर अवसर को दलित और वंचित लोगों के हितों के लिए इस्तेमाल करने अपनी पूरी शक्ति के साथ ईमानदारी से कोशिश किए. आंदोलन के बारे में और रास्तों के बारे में वे हमेशा अन्वेशरत थे और बदलाव के लिए हमेशा तर्त्पर रहते थे. वे भारत की नवजनवादी क्रांति के व्यापक संघर्ष में ऐतिहासिक मित्रशक्ति थे. इस दृष्टि से देखकर, समाज की परिवर्तन के लिए उनके सकारात्मक पहलू को लेना चाहिए. साथ ही क्रांति के रास्ते में अवरोध बनने वाले पहलुओं से बचना है. आंबेडकर के नेतृत्व में चला आंदोलन, उनका साहित्य निश्चित ही जाति निर्मूलन आंदोलन और जनवादी समाज का निर्माण में प्रेरणा देती है. उसे आलोचनात्मक दृष्टि से अध्ययन करना चाहिए. उसी समय में आंबेडकर को अपने स्वार्थ के लिए इस्तेमाल करने वालों पर और उनके विचारों का गलत अर्थ निकालते हुए जनता को भटकाने वालों पर भी संघर्ष करना चाहिए. आंबेडकर का जाति उन्मूलन सिद्धांत जनवादी समाज के निर्माण की दीर्घकालीन प्रक्रिया में एक प्रमुख हिस्सा तो है ही, लेकिन यही उसका अंत नहीं है. वह सिद्धांत पर्याप्त नहीं है. यह प्रक्रिया आंबेडकर के पहले भी जारी थी, अब भी जारी है. हमें इसे अंत ले जाना होगा. इसके लिए विशेषकर दलित मुक्ति के लिए मजदूर वर्ग के नेतृत्व में उत्पीड़ित वर्गों, दलित अन्यान्य उत्पीड़ित जातियों एवं अन्य उत्पीड़ित तबकों का संयुक्त व जुझारू संघर्ष ही एकमात्र रास्ता है और वह नव जनवादी क्रांति ही है. इसे स्पष्ट रूप से देश की तमाम जनता के बीच हमारी पार्टी

राजनीतिक रूप से लगातार प्रचार करते हुए उन्हें एक महान शक्ति के रूप में संगठित करना होगा.

लंबे समय से ही दलितों की समस्याओं के हल के लिए विभिन्न क्षेत्रों में असंख्य संगठन व संस्थाएं काम कर रही हैं. दलितों के नाम पर शासक वर्गीय, पेटि बुर्जुआई, जाति एवं उपजाति के आधार पर राजनीतिक पार्टियां गठित होकर काम कर रही है. ये संगठन, संस्थाएं एवं पार्टियां सभी आंबेडकरवाद की मनमानी व्याख्या करते हुए उसे ही अपना सिद्धांत बता रही हैं. शासक वर्गीय दलित पार्टियों, मार्क्सवाद एवं हमारी पार्टी का विरोध करने वाले दलित संगठनों एवं संस्थाओं जो आंबेडकर का नाम लेकर अपना उल्लू सीधा कर रहे हैं, के शासक वर्गीय स्वभाव/शासक वर्गीय अनुकूल राजनीतिक अवसरवाद का जनता, खासकर दलित एवं अन्य उत्पीड़ित जातियों की जनता के बीच भंडाफोड़ करना चाहिए; उनके नेतृत्व को जनता से अलग–थलग करना चाहिए. अन्य आंबेडकरवादी, दलित संगठनों व संस्थाओं को व्यापक जनवादी आन्दोलन में खड़ा करने के लक्ष्य से उनके साथ दोस्ताना रुख अपनाकर उनके साथ मिलकर काम करना चाहिए. पार्टी उनके आंदोलनों का समर्थन करना है. हमारे साथ जोड़कर संघर्ष करना चाहिए. उसी समय दलित जन समुदायों की मुक्ति के लक्ष्य से हमें स्वतंत्र रूप से दलित समस्याओं पर व्यापके आधार के साथ मजबूत आंदोलनों का निर्माण करना चाहिए और संगठनों को गठित करना चाहिए.

आंबेडकर का सिद्धांत

आंबेडकर सैद्धांतिक रूप से मार्क्सवाद के विरोधी नहीं थे। उन्होंने मार्क्सवाद का यथासंभव प्रचार किया। उनका कहना था कि यदी कोई फिलॉसॉफी उनके नजदीक है तो वह मार्क्सवाद है। लेकिन वे 'लंदन स्कूल ऑफ इकोनामिक्स' में पढ़ाई के दौरान देवे फेबीयनवाद से प्रभावित थे. इस तरह के सैद्धांतिक विचारधारा को व्यवहारवाद (pragmatism) या कारणवाद (instumentalism) कहा जाता है. कारणवादी को वैज्ञानिक विचारधरा की मान्यता है.

आंबेडकर ने जो प्राग्माटिस्ट दृष्टिकोण अपनाकर व्यवहार में लागू किया,

की तरह पैठ कर गई पैरोकारी पद्धतियों से दलित जन समुदायों को बाहर नहीं ला सकते हैं. इसी तरह इन अवसरवादी नेताओं को दलित जनता से अलग–थलग किए बगैर नव जनवादी क्रांति में व्यापक दलित समुदाय को मजबूती से गोलबंद नहीं कर सकते हैं.

दलितों की शिक्षा, रोजगार एवं अन्यान्य सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक विकास के चलते दलितों में से कुछ लोग कृत्रिम सामाजिक ओहदे के लिए कोशिश करते हुए पीड़क जातियों के पीड़क वर्गों का अनुकरण करते हुए अपने भाइयों के साथ 'नदी पार करने के बाद नाव को डुबोने वालों' जैसा व्यवहार कर रहे हैं. दलितों में इनके जैसों के अलावा ईमानदारी के साथ दलितों की प्रगति के बारे में सोचने वाले भी कई लोग हैं. ये दलितों की कुछ भलाई करने की सोच रहे हैं. दलितों पर होने वाले हमलों, उनकी अमानवीय हत्याओं के प्रतिक्रियास्वरूप जहां तक संभव है, उन्हें मदद पहुंचा रहे हैं एवं उन हमलों के खिलाफ प्रदर्शनों व आंदोलनों में शामिल हो रहे हैं. इस तरह की ताकतों को ही क्रांतिकारी आंदोलन की ओर मोड़ने की अत्यंत आवश्यकता है.

आज का दलित आंदोलन – बसपा

1990 के दशक में एक तरफ सामाजिक अंतरविरोधों के तीखे होने व दलितों पर जातिगत अत्याचारों में बढ़ोत्तरी के चलते एवं दूसरी ओर देश के कई राज्यों में क्रांतिकारी पार्टियों के नेतृत्व में जारी सामंती विरोधी व साम्रज्यवादी विरोधी किसान संघर्ष समाज को उल्लेखनीय स्तर पर प्रभावित करने के कारण देश के विभिन्न इलाकों के दलित व्यापक पैमाने पर जागृत हुए हैं. उत्तर के राज्यों – उत्तर प्रदेश, बिहार, पंजाब, हरियाणा एवं मध्य प्रदेश जहां औपनिवेशिक शासनकाल में जाति व्यवस्था में अपेक्षाकृत कम बदलाव हुए थे, में उत्पीड़ित जनता विशेषकर दलित जागृत हुए हैं. इनमें से दलित सरकारी उच्च अधिकारियों की बुनियाद पर स्थापित पार्टी है, बहुजन समाज पार्टी (बसपा). जातिगत भेदभाव के खिलाफ सामाजिक व राजनीतिक सत्ता की चाह रखने वाली दलित जनता की जनवादी मनोभावनाओं का इस्तेमाल करके यह पार्टी अस्तित्व में आई. बसपा, ब्राह्मण विरोधी लफ्फाजी के

में पुनः सत्ता में आई. उत्तर प्रदेश एवं बिहार के पूंजीवादी/सामंती तबकें और व्यापक आधार पर विभिन्न केन्द्रीय व क्षेत्रीय शासक वर्गीय गुट एकबार और गठबंधन बनाकर, जनता दल का गठन करके 1984 में दिल्ली में सत्ता में आए थे. अपने सामाजिक आधार को मजबूत करने के लिए उन्होंने अन्य पिछड़ी जातियों (ओबीसी) को सरकारी नौकरियों में एवं उच्च स्तर की व्यावसायिक शिक्षा में आरक्षण की मांग की थी. राज्य स्तर पर विभिन्न कमिशनों की नियुक्ति, 1977 में मण्डल कमिशन की नियुक्ति इसी क्रम का हिस्सा थी. पिछली जातियों के ग्रामीण पीड़क वर्ग सरकारी संसाधनों में अपने हिस्से की हामी हासिल करने के लिए एवं गरीब वर्गों की अपनी जातियों के लोगों पर अपनी पकड़ मजबूत करने के लिए केन्द्र सरकार की सेवाओं में नौकरियों की नियुक्ति से संबंधित मंडल कमिशन की सिफारिशों पर अमल करने का प्रयत्न किया.

आज की अर्द्ध औपनिवेशिक, अर्द्ध सामंती व्यवस्था में तीखे होते आर्थिक व राजनीतिक संकट ने जाति व्यवस्था के अंतरविरोधों के तीखा होने की राह बनाई. यह परिणाम दो पहलुओं से व्यक्त हुआ. 1. दलितों में जातिगत भेदभाव के खिलाफ बढ़ती जनवादी चेतना – विशेषकर उन पर ग्रामीण इलाकों में जारी हत्याकाण्ड, 2. अन्य पिछड़ी जातियों के लिए आरक्षण उपलब्ध कराने की मांग उठना; आरक्षण नीति के खिलाफ तीव्र आंदोलन छिड़ना.

दलितों पर हमलें

तमिलनाडू के कील्वेनमणि में 1968 में दलित खेत मजदूरों पर सामूहिक नरसंहार हुआ. ज्यादा मजदूरी की मांग को लेकर दलितों, जो खेत मजदूर थे, द्वारा हड़ताल की कोशिश करने के प्रतिकार स्वरूप पीड़क जातियों की सामंती तानाशाही शक्तियों ने इस नरसंहार को अंजाम दिया था. उसी तरह देश भर के कई इलाकों में विशेषकर 1970 के दशक की आखिरी भाग से दलितों पर उसी तरह के नरसंहार बढ़ते गए. इनमें आन्ध्र प्रदेश के कारमचेडु(1985), नीरुकोण्डा(1987), चुण्डूरु(1991), पदिरिकुप्पम, वेम्पेण्टा, लक्ष्मिपेटा; बिहार के बेल्ची(1977), परसबिगहा(1980), बथानीटोला(1996), लक्ष्मणपुर बाथे(1997), शंकरबिगहा(1999), बालबटरा(2006), रामनगर(2006); हरियाणा के दुलिना–झज्जर(2002), तेहरावार(2003), गोहाना(2005), मुहम्मदपुर(2006), किला

जाफरगढ़(2006); कर्नाटक के तत्तूर, बेंडिगेरि, कंबालमपल्ली(2000), पन्नेनूर(2001), कडुकोलु(2006);, महाराष्ट्र के नांदेड(1993), रमाबाई नगर, मुम्बई(1997), खैरलांजि(2006); ओड़िशा के भानपूर; राजस्थान के कुम्हेर; तमिलनाडू के नागपट्टणम, कोडियनकुलम(1995), नेलावावु(1997), तिरुनल्वेली(1997); उत्तर प्रदेश के जहराना और असनपुर नरसंहार प्रमुख थे. गुजरात के अहमदाबाद एवं अन्य इलाकों में आरक्षण विरोधी आंदोलनकारियों ने दलितों के घरों पर पुलिस की मदद से हमले करके उनके घरों को ध्वस्त किया था. उन पर सामाजिक बहिष्कार अमल किया था. इसी समय दलितों पर जारी जातिगत दमन का गरीब दलित जनता द्वारा मुकाबला करते हुए प्रतिरोध करना बढ़ गया था. इस प्रतिरोध को दबाने के लिए सामंती तानाशाही जातीय दुरहंकारी शक्तियों ने हर राज्य में दलितों पर अमानवीय नरसंहारों एवं अनगिनत हमलें किए.

जहां तक मजदूरों का संबंध है, जाति–वर्ग के बीच का संबंध काफी हद तक एक दूसरे के साथ जुड़ा हुआ है. दलितों पर ज्यादातर संदर्भों में हमले करने वालों में ज्यादातर गैर ब्राह्मण पीड़क जातियों के भूस्वामियों के साथ–साथ मध्यस्थ जातियों के सामंती तानाशाही शोषक ही थे. यह स्पष्ट है कि इन नरसंहारों व अत्याचारों को अंजाम देने वाले, जातीय दुरहंकारी थे. करीबन इन तमाम घटनाओं के पीछे एक दूसरे से अभिन्न मजबूत सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक कारण मौजूद थे. जनवादी आकांक्षाओं के साथ सिर उठाकर स्वतंत्र रूप से खड़ा होने के लिए दलितों ने जब भी कोशिश की या अपने न्यायपूर्ण सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक हकों को हासिल करने के लिए जब भी संघर्षों के लिए तैयार हुए या अपने ऊपर जारी जुल्म का प्रतिरोध करने की जब भी कोशिश की तभी यह सब हुए हैं. राज्यसत्ता के साथ सांठगांठ करके ही ब्राह्मणीय पीड़क जाति के दुरहंकारी, सामंती शक्तियों ने खुलेआम इन हमलों को अंजाम देने के साथ–साथ कानून से भी स्वयं को बचा लिया था. यहां एक और बात साफ होती है कि पुलिस–न्याय व्यवस्थाएं शोषकों–पीड़क जातियों के अनुकूल हैं, गरीबों व दलितों के खिलाफ हैं. हमारी पार्टी के नेतृत्व में देश के कई इलाकों में वर्ग संघर्ष तेज होकर सामंती मुखियाओं के आधिपत्य को धक्का देकर उत्पीड़ित वर्गों के आधिपत्य को जिन

विचारधारा के खिलाफ लड़ने की बात कर रहे हैं, उस ब्राह्मणवादी जातीय दृष्टिकोण से ही लैस होकर, उत्पीड़ित वर्ग की एकता के लिए बाधा बनकर जातीय व्यवस्था को यथास्थिति में परिरक्षित कर रहे हैं. दलितों की जनवादी आकांक्षाओं एवं जुझारूपन को क्रांतिकारी संघर्षों की तरफ झुकने से यह नेतृत्व बार–बार रोकते हुए उन्हें संसदीय राजनीति की ओर मोड़ रहा है. तमाम किस्म के जातिगत उत्पीड़न के खिलाफ एवं जाति व्यवस्था की बुनियाद को उखाड़ फेंकने के लिए क्रांतिकारी जनवादी ताकतों द्वारा संयुक्त संघर्षों के निर्माण में वे बाधा बन रहे हैं.

दलित जनता को शुरुआत से ही अपना वोट बैंक मानने वाली कांग्रेस पार्टी अनुसूचित जातियों व अनुसूचित जन जातियों पर असीम प्यार का दिखावा कर रही है. आरक्षित निर्वाचन क्षेत्रों के जरिए ग्राम पंचायत के सरपंच/बस्ती के पार्षद से लेकर केन्द्रीय मंत्री तक के राजनीतिक पदों से नवाज कर उसने दलित नेताओं को अपने राजनीतिक दलालों में तब्दील किया है. गांवों, शहरों में एवं प्रत्येक दलित बस्ती में हमें इस तरह के दलित नेता दिखते हैं. पैरोकारी के जरिए अवैध कमाई प्राप्त ये नेता साथी दलितों का उत्पीड़न करते हुए लालच या डरा धमकाकर उन्हें अपने नेतृत्व के मातहत रखने का प्रयत्न कर रहे हैं. इस हेतु वे जातिगत आचार व्यवहारों का इस्तेमाल कर रहे हैं. ये राजनीतिक दलाल नेता दलित हितों के लिए नुकसानदेह एवं शासक वर्गों की चाकरी करने वाली राजनीति का हर दिन प्रवचन दे रहे हैं. ग्रामीण इलाकों में भी दलितों का एक तबका इसी तरह का है. उनके साथ–साथ शिक्षा के अवसरों में बढ़ोत्तरी, रियायतें एवं सब्सिडियों की वजह से दलितों का एक छोटा तबका नव धनाढ्य वर्ग बन गया है. कुछ परिवार औद्योगिक बुर्जुआ वर्ग, व्यापारी वर्ग एवं उच्च स्तर के नौकरियों के जरिए नौकरशाहों के रूप में आर्थिक संपन्नता एवं राजनीतिक प्रभुत्व हासिल कर रहे हैं. 'दलितों को ही राजसत्ता' के नारे के जरिए फायदेमंद होने वाला प्रमुख वर्ग यही है. आंबेडकर के काल में आए आरक्षण से दलितों की जितनी भलाई हुई थी, शासक वर्गों की रहमोकरम पर निर्भर करके हासिल रियायतों के चलते उन्हें उससे कम नुकसान नहीं हो रहा है. इन नेताओं के शासकवर्गीय अनुकूल रुख एवं पद्धतियों का पर्दाफाश किए बगैर दलितों के बीच में आज एक बरगद

आंदोलन टकड़ों में बंट गया. नेतृत्व के समझौता वादी रुख के चलते दलाल नौकरशाही पूंजीपति एवं सामंती शासक वर्गों का वह आधार बन गया. दलित पैंथरों के आंदोलन के पहले दादा साहब गायकवाड के नेतृत्व में 1964–66 के मध्यकाल में देश भर में जमीन की मांग को लेकर आयोजित सत्याग्रह में लाखों दलित जनता शामिल हुई. इस आंदोलन ने शासन व्यवस्था में कंपकंपी पैदा की. यह दलित आंदोलनों में एक नए रुझान को सामने लाया. लेकिन कम समय में ही नेतृत्व के समझौतावादी रुझानों के चलते उस पर पानी फिर गया.

उच्च वर्गीय दलित व बहुजन राजनीति :

दलितों के इस विद्रोह के उभार के चलते शासक वर्गों ने दलितों में उच्च वर्गों का उद्देश्यपूर्वक पोषण किया है. ये दलित उच्च वर्ग उद्देश्यपूर्वक ढंग से अपने स्वयं के हितों को साधने के लिए दलितों के बीच सौहाद्रता का आह्वान करते हुए अन्य उत्पीड़ित वर्गों एवं क्रांतिकारी पार्टियों के साथ एकताबद्ध होने से इनकार करने वाले संकीर्णतावादी रुझान अपनाए हुए हैं. ये राजनीतिक पैरोकारों के रूप में दलित जनता में शासक वर्गों के राजसत्ता के प्रति बार–बार विश्वास पैदा करने वाली भूमिका निभा रहे हैं. ये उच्च वर्गीय दलित नेता अपने वर्गीय हितों की पूर्ति के लिए, शासक वर्गों की जरूरतों के मुताबिक आंबेडकरवादी विचारधारा के नाम पर शासक वर्गीय विचारधारा को फैला रहे हैं. ये संविधान की पवित्रता की बढ़ाई कर रहे हैं. उदारपंथी राजनीतिक, दार्शनिक चिंतन, सौदेबाजी, मान–मनव्वल की राजनीति का समर्थन कर रहे हैं. इसीलिए उत्पीड़ित जनता के अन्य तबकों के साथ दलित एकता के प्रति वे संकीर्णतावादी रुख अपना रहे हैं. या जातिगत एकता को असंभव बनाने वाले वर्ग अंतरविरोधों को ध्यान में न लेते हुए दलितों व अन्य पिछड़ी जातियों के बीच सिर्फ जातिगत एकता के बारे में यह कहते हुए बात कर रहे हैं कि वे दलित–बहुजन हैं. दलित एवं ओबीसी जनता की मूलभूत समस्याओं में से किसी एक को भी अपनाने के लिए वे तैयार नहीं हैं. इसीलिए दलितों के इस उच्च वर्गीय राजनीतिक नेतृत्व शासक वर्गीय पार्टियों के साथ सांठगांठ करके दलित जनता को शासक वर्गों के विचारधारात्मक एवं सांगठनिक प्रभुत्व के मातहत रखने का प्रयास कर रहा है. ये जिस ब्राह्मणवादी

इलाकों में स्थापित किया गया था/बढ़ाया गया था, उन इलाकों में ऐसे हमलें करीब–करीब पूरी तरह रुक गए हैं. लेकिन ऐसे इलाकों में भी जातिगत भेदभाव एवं पक्षपात विभिन्न प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूपों में जारी हैं. ऐसे इलाकों में जहां क्रांतिकारी आंदोलन कमजोर हुआ है कहीं–कहीं दलितों पर पीड़क जातियों के हमलें हो रहे हैं. जिन इलाकों में क्रांतिकारी आंदोलन प्राथमिक स्तर पर है, वहां कुछ फर्क के साथ वैसी ही स्थिति है जैसे गैर आंदोलन के इलाकों में है.

जाति श्रम विभाजन के अलावा, श्रमिकों का विभाजन भी करती है. यह सत्ताधारी वर्गों को अपनी सत्ता चलाने के लिए और शोषण के लिए पारंपरिक रूप से हासिल हुआ एक हथियार है. वर्तमान आर्थिक संकट की स्थिति में सत्ताधरी वर्ग ब्राह्मणीय हिंदुत्व फासीवादी सरकार को गठित किए. इससे नये तौर पर जातिगत और धार्मिक सांप्रदायिक दंगे बढ़े हैं. केन्द्र में मोदी के नेतृत्व में भाजपा के सत्तासीन होने के बाद देश भर में ब्राह्मणीय, हिन्दू धर्मोन्मादी पीड़क जातीय दुरहंकारी संघ परिवार संस्थाओं एवं उनके सशस्त्र गिरोहों ने मिलकर राज्यसत्ता की मदद से दलितों व धार्मिक अल्पसंख्यकों पर हमलें तेज किए हैं. ये शक्तियां सरकार की आड़ में दलितों, मुसलमान एवं ईसाई धार्मिक अल्पसंख्यकों, आदिवासियों, क्रांतिकारियों एवं जनवादी, धर्म निरपेक्ष, तर्कवादी शक्तियों एवं संस्थाओं का दमन करने के लिए वर्तमान में मौजूद प्रतिक्रांतिकारी कानूनों का इस्तेमाल करने के साथ–साथ नए–नए फासीवादी कानून बना रहे हैं. इसी का एक हिस्सा है, गोमांस खाने, गोहत्या करने, गायों की चोरी करने, गैर कानूनी तरीके से मांस की दूकानें संचालित करने आदि के बहाने ये फासीवादी गिरोह कई राज्यों में दलितों व मुसलमानों की सामूहिक व खुलेआम हत्या कर रहे हैं या उन्हें घायल कर रहे हैं या जेलों में ठूंस रहे हैं या आजीविका से वंचित कर रहे हैं या इन सभी पर अमल कर रहे हैं. इसी तरह देश के कई राज्यों में गोहत्या पर पाबंदी वाले कानून को जनता पर थोप रहे हैं. हाल ही में केन्द्र सरकार ने भी इसी तरह के निर्णय को देश की जनता पर थोपना आरंभ किया. इस तरह ब्राह्मणीय हिन्दू धर्मोन्मादी, पीड़क जातीय दुरहंकारी फासीवादी ताकतें एवं राज्यसत्ता का फासीवाद देश की जनता में भय व आतंक पैदा कर रहे हैं.

इस तरह के हमलों की निरंतरता के रूप में ही गुजरात राज्य के उना में ब्राह्मणीय सामंती शक्तियों ने दलितों पर हमला किया था. तेलंगाना राज्य के पातापल्ली में जातीय दुरहंकारियों ने दलित बस्ती पर भारी हमला किया था. महाराष्ट्र में कृष्णा नामक दलित सामाजिक कार्यकर्ता पर हमला किया था. ये हमलें विश्व विद्यालयों तक भी पहुंच गए हैं. हैदराबाद केन्द्रीय विश्व विद्यालय में दलित छात्र रोहित वेमुला ने हिन्दू धार्मिक अनुकूल विश्व विद्यालय की पालक मण्डली की यातनाओं एवं हिन्दू धर्मोन्मादी एबीवीपी सहित फासवादी केन्द्र सरकार के दबाव व दमनकारी कार्रवाईयों के विरोध में आत्महत्या की थी. समाज के साथ–साथ शिक्षा व्यवस्था, कैम्पसों का भगवाकरण एवं बाजारीकरण का दुष्परिणाम ही था, रोहित वेमुला की मौत. इस ब्राह्मणीय हिन्दू धर्मोन्मादी जातीय दुरहंकारी फासवादी शक्तियों एवं फासीवादी राजसत्ता द्वारा जारी नरसंहार, हमलें, प्रताड़ना एवं इनके खिलाफ दलितों, अल्पसंख्यकों एवं जनवादी धर्मनिरपेक्ष ताकतों द्वारा विभिन्न रूपों में जारी प्रतिरोध आज के समाज के तीखे अंतरविरोधों की अभिव्यक्तियां ही हैं, जो क्रांतिकारी समाधान की मांग कर रही हैं. देश में दलित आंदोलन के पुनः उभरने के प्रेरकों के रूप में इन्होंने काम किया भी. इन घटनाओं के संदर्भ में लाखों दलितों ने इस ब्राह्मणीय अनुकूल राज व्यवस्था के खिलाफ अपने विरोध को विभिन्न रूपों में जुझारू ढंग से व्यक्त किया. उना घटना के संदर्भ में वहां के दलितों ने 'अब से मवेशियों के खाल उधेड़ने का पेशा हम अपनाएंगे नहीं, हमें जमीन चाहिए' नारे को बुलंद किया था. इन संघर्षों के प्रति जनवादियों, क्रांतिकारी पार्टियों, जन संगठनों, मुसलमानों, आदिवासियों एवं विभिन्न तबकों की जनता ने अपना सक्रिय समर्थन जताया था.

शिक्षा, रोजगार, कृषि, व्यापार, औद्योगिक व राजनीतिक क्षेत्रों में एक हद तक मौका मिलने से विशेषकर शिक्षा और संगठित आंदोलनों के कारण दलितों में जनवादी आकांक्षाएं बढ़ रही हैं. वे अपनी भागीदारी के लिए हर स्तर पर हस्तक्षेप कर रहे हैं. जातीय भेदभाव, अत्याचार और हमलों के खिलाफ दलित जनता का जागृत व संगठित होकर आंदोलित होना बढ़ रहा है. दलितों के लिए आंबेडकर आज भी निर्विवादित नेता है. दलित संगठन कुछ इलाकों में दलित पैंथर्स के रूप में हैं, और कुछ इलाकों में आंबेडकर सेवा समिति के नाम

वाला स्वतःस्फूर्त विद्रोह था एवं साझी रणनीति व कार्यनीति नहीं थी. इसलिए 1975 तक इस आंदोलन का छिन्न भिन्न होना प्रारंभ हुआ.

भारत की जनवादी क्रांतिकारी आंदोलन का एक हिस्सा था, दलित पैंथर आंदोलन. उस इलाके में क्रांतिकारी वर्ग संघर्ष के न होने के चलते वह आंदोलन अकेले ही जारी रहा. कांग्रेस सरकार ने इस आंदोलन के नेतृत्व को सांस्कृतिक पुरस्कार एवं अन्य लालच देकर आकर्षित किया. क्रमशः उस नेतृत्व के कई लोग राजनीतिक दिवालियेपन, अवसरवाद एवं लंपटीकरण का शिकार हो गए. फिर भी राज्य के दलित युवा एवं छात्र विभिन्न इलाकों में मराठवाडा विश्वविद्यालय का नाम बदलने, रिडिल्स विवाद एवं अन्य स्थानीय समस्याओं पर बार–बार सक्रिय रूप से एवं जुझारू ढंग से सामने आए. दलित पैंथर आंदोलन ने महाराष्ट्र समाज को हिलाकर रख दिया था. देश भर में चेतनत हो रहे दलित जनता को इस आंदोलन ने काफी प्रेरणा दी. देश में जातिगत भेदभाव एवं जातीय पक्षपात जारी हैं, इस परिस्थिति को स्वीकार करने पर इस आंदोलन ने सभी को मजबूर किया था. पीड़क जातियों का एकाधिकार, आधिपत्य एवं समाहित करने वाली कुटिल राजनीति, पर इसने जोरदार प्रहार किया था. विशेषकर सांस्कृतिक क्षेत्र काफी प्रभावित हुआ. उत्पीड़ित जनता के साहित्य को अभूतपूर्व पहचान मिली. देश के अन्य इलाकों के दलितों पर इस आंदोलन ने काफी असर डाला.

कर्नाटक में दलित आंदोलन 1974 में प्रारंभ हुआ था. यद्यपि यह आंदोलन शहरों में शुरू हुआ था, पेटि बुर्जुआ वर्ग ने उसका नेतृत्व किया था लेकिन जल्द ही यह गांवों तक फैल गया था. उसने पीड़क जातियों के अत्याचारों के खिलाफ दलित खेत मजदूरों को संगठित किया था. लेकिन, राजसत्ता पर दबाव डालकर अपने अधिकारों को बचाने की कार्यनीति अपनाई गयी थी. पीड़क जातियों के सामंती हितों के खिलाफ उस आन्दोलन ने प्रत्यक्ष रूप से कभी कभार आंदोलन चलाये.

एक दशक के भीतर ही इस आंदोलन के नेतृत्व ने संघर्ष को छोड़ दिया. चुनावी राजनीति में शामिल होते हुए वह शासक वर्गों के नजदीक हो गया. इस आंदोलन के नेतृत्व ने गांधीवाद को स्वीकार किया. इस आंदोलन के नेतृत्व के पेटि बुर्जुआ चरित्र के चलते एवं उनके चुनावी राजनीति में उतरने से

पक्षपात जारी थे. इस परिस्थिति के साथ ब्राह्मणीय विचारधारा, हिन्दू सांस्कृतिक आधिपत्य, अवसरों का अभाव एवं भ्रष्ट चुनावी राजनीति के जुड़ने से दलित युवाओं में जबरदस्त असंतोष पैदा हुआ. 1960 के दशक में दुनियाभर में छात्रों, युवाओं, काले राष्ट्रयता के लोगों ने बड़े पैमाने पर विद्रोह किया था. उन आन्दोलनों व नक्सलबाड़ी के आंदोलन के प्रभाव से महाराष्ट्र में दलित युवाओं ने दलित पैंथर के झण्डे तले विद्रोह किया.

यह आंदोलन 1971 में मुम्बई शहर में प्रारंभ हुआ. शुरुआत में यह एक सांस्कृतिक आंदोलन था. उस शुरुआती अवस्था में आन्दोलनकारियों ने कविताएं व लेखों युक्त छोटी–छोटी पत्रिकाओं का प्रकाशन किया. झोपड़पट्टियों, छात्रावासों एवं चालों के दलित युवाओं एवं छात्रों ने मनुस्मृति की निंदा करके 15 अगस्त को झूठी आजादी दिवस के रूप में घोषित किया था. चुनाव बहिष्कार का आह्वान दिया था. हालांकि यह आंदोलन ज्यादा समय तक नहीं टिक सका. लेकिन महाराष्ट्र के पुणे, नागपुर जैसे अन्य शहरी इलाकों, मध्यप्रदेंश के नगरों एवं चंड़ीगढ़, भोपाल, दिल्ली, आगरा जैसे अन्य राज्यों के शहरों तक फैल गया था. इन शहरों में दलित पैंथरों की इकाइयां गठित हो गई. पैंथरों ने जातिगत उत्पीड़न के खिलाफ विद्रोह किया था. जातिगत उत्पीड़न के बारे में जिन गांवों से उन्हें शिकायत मिलती थी, वे वहां अभियान के रूप में जाते थे. मनुस्मृति के दहन के जरिए वे जाति व्यवस्था के विचारधारात्मक किले पर हमला जारी रखे हुए थे. मुम्बई में लोकसभा के लिए हुए उप चुनावों का बहिष्कार करने का आह्वान देकर उन्होंने भ्रष्ट संसदीय व्यवस्था पर हमला किया था. उनके आह्वान के मुताबिक उस इलाके में करीबन 85 प्रतिशत दलितों ने उन चुनावों का बहिष्कार किया था. देश में खुले तौर पर दलित आंदोलन द्वारा राज्य विरोधी रुख अपनाने का वही पहला मौका था. वे अपने प्रदर्शनों के लिए हजारों की संख्या में जनता को गोलबंद किया था. सरकारी दमन का उन्होंने सामना किया. उनके द्वारा आयोजित एक प्रदर्शन में शिवसेना ने दंगा पैदा किया था. तब हुई पुलिस गोलीबारी में एक युवा कवि की मौत हुई थी. दलितों की झोपड़पट्टियों में एवं चालों में दंगे भड़काने वाली शिवसेना के साथ उन्होंने जुझारू संघर्ष किया. पैंथरों ने राज्य दमन का सामना किया था, लेकिन वह आन्दोलन चूंकि पेटि बुर्जुआ नेतृत्व

पर, अनुसूचित जातियों के हकों के परिरक्षण संगठनों के नाम पर, विभिन्न छात्र, युवा, महिला एवं साहित्यिक व सांस्कृतिक संगठनों के नाम पर संगठित हो रहे हैं. जब एक जगह में दलितों पर अत्याचार होते हैं तो न सिर्फ उस इलाके में बल्कि राज्य व देश के स्तर पर भी दलित उस घटना पर अपना गुस्सा व्यक्त करते हुए पीड़ितों की मदद एवं वहां के संघर्ष में हाथ बंटाने आगे बढ़ रहे हैं. यह दलितों में बढ़ती जनवादी चेतना का मिसाल है. यह भारत की जनवादी क्रांति के लिए मददगार परिणाम है. इसे सही दिशा में बदलने की महत्वपूर्ण जिम्मेदारी हमारी पार्टी पर है.

आरक्षण नीति – हमारा दृष्टिकोण :

भारतीय संविधान के मुताबिक 1947 के बाद के काल में अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जन जातियों को सरकारी नौकरियों एवं शिक्षण संस्थाओं की सीटों में एक ठोस प्रतिशत आरक्षण का आबंटन शुरू हुआ था. दरअसल 1920 के दशक में ही औपनिवेशिक शासकों ने देश के कुछ इलाकों में पिछड़ी जातियों को आरक्षण शुरू किया था. औपनिवेशिक शासनकाल के दौरान 1943 में ही अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षण शुरू किया गया था. लेकिन 60 के दशक के मध्य भाग तक इस आरक्षण नीति पर शासकों ने अनिच्छा के साथ एवं आधा–अधूरे ढंग से ही अमल किया था. गैर ब्राह्मण जातियों के ऊपरी तबकों ने जब दक्षिणी राज्यों में सत्ता हासिल की थी, तब मजबूत ब्राह्मण–विरोधी आंदोलन के दबाव से व्यावसायिक शिक्षण संस्थाओं एवं सरकारी नौकरियों में पिछड़ी जातियों (ओबीसी) के लिए एक बड़े हिस्से को आरक्षित किया था. उसके बाद 1980 के दशक से अन्य पिछड़ी जातियों (ओबीसी) के लिए आरक्षण नीति को उत्तर भारत के राज्यों में भी अमल किया जा रहा है.

भारत असमान विकास वाला पिछड़ा देश है. उद्योग, बैंक, वित्तीय संस्थाएं, व्यापार, निर्माण कंपनियां, खनन परियोजनाएं, परिवहन कंपनियां, शिक्षा, स्वास्थ्य एवं पर्यटन आदि संस्थाओं में पूंजीनिवेश पीड़क जातियों के एक पीड़क वर्ग के हाथों में, पारसी जैसे गैर हिन्दुओं के एक छोटे पीड़क वर्ग के हाथों में एवं पीड़क वर्ग में तब्दील अन्य जातियों के एक तबके के हाथों में

केन्द्रित है. इनमें से अधिकांश साम्राज्यवादियों के साथ सांठगांठ करके दलालों के रूप में काम करने वाले ही हैं. उसी तरह 1947 के पहले अंग्रेज साम्राज्यवादियों एवं बाद में उनके साथ–साथ अन्य साम्राज्यवादियों खासकर अमेरिका ने भारतीय अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर पूंजी निवेश किया है. इससे देश में सार्वजनिक क्षेत्र से ज्यादा निजी क्षेत्र में मजदूर एवं कर्मचारी काम कर रहे हैं. इस देश में ज्यादातर भ्रष्टाचार, भाई भतीजावाद, जातिवाद के आधार पर नौकरियों में नियुक्तियां होती हैं. ऐसी परिस्थितियों में आज भी कमजोर वर्गों के लिए सार्वजनिक क्षेत्र ही स्थायी रोजगार उपलब्ध कराने वाले प्रधान साधन के रूप में मौजूद है. दलितों व अन्य उत्पीड़ित जातियों में सुशिक्षित युवा बढ़ रहे हैं. दलित अपने आर्थिक स्तर को विकसित करने एवं सामाजिक ओहदे को बढ़ाने की आकांक्षा रखते हैं. इनके लिए नौकरियों का प्रधान स्रोत सार्वजनिक क्षेत्र ही है. उसी समय हमारे देश की अर्थ व्यवस्था पर साम्राज्यवाद के बढ़ते शिकंजे के चलते आर्थिक संकट, पराधीनता, विकृत विकास तेज हो गए हैं. दिन ब दिन अत्यंत तेजी से बढ़ते शिक्षित बेरोजगारों की आजीविका की आवश्यकताओं की पूर्ति सार्वजनिक क्षेत्र नहीं कर पा रहा है. नौकरियों के लिए जूझना बढ़ रहा है. इससे दलितों के आरक्षण के प्रति पीड़क जातियों के मध्यमवर्गीय लोगों में नफरत पैदा हुआ है. दलितों को इस कानूनी अधिकार से भी वंचित रखने के लिए पीड़क जातियों के दुरहंकारी ताकतों, सरकारी उच्चाधिकारियों एवं शासकों ने आरक्षण पर पानी फेरने की तमाम कोशिशें की. उतना ही नहीं, उत्पीड़ित जनता को जातिवार बांटने के लिए इस नीति का इस्तेमाल किया. इसीलिए आरक्षण ने शहरी इलाकों की पीड़क जातियों के मध्य वर्ग एवं दलितों के बीच में बड़े पैमाने पर तनाव पैदा किया. जनता के बीच का अंतरविरोध, शत्रुतापूर्ण अंतरविरोध में तब्दील हो गया. इसने छात्र युवाओं के आंदोलनों, झड़पों एवं कुल मिलाकर दलितों पर हमलों की ओर रुख किया.

आरक्षण विरोधी आंदोलनों ने यह जाहिर किया कि पीड़क जातियों के आधुनिक तबकें कहे जाने वाले शिक्षित लोगों में जातिय पक्षपात एवं जातिवादी विचार किस कदर पल बढ़ रहे थे. सरकारी संसाधनों एवं प्रतिष्ठात्मक व अत्यंत लाभकारी पेशों पर अपने एकाधिकार कायम रखने के लिए पीड़क जातियों के

करना जारी है. ऐसी परिस्थितियों में मलाईदार परत को आरक्षण से हटाने का तर्क सही नहीं है. लेकिन शिक्षण संस्थानों में एवं नौकरियों में आरक्षण के कोटे के भर जाने के संदर्भ में मलाईदार परत को चाहिए कि वह अपनी जाति के पिछड़े लोगों को आरक्षण का अवसर उपलब्ध कराने में मदद करने की दृष्टि से उन्हें छोड़ने की चेतना प्रदर्शित करें. इस हेतु दलित एवं अन्य उत्पीड़ित जातियों का प्रतिनिधित्व करने वाले संगठनों एवं संस्थाओं को प्रयास करने की जरूरत है. हमारी पार्टी के नेतृत्व में कार्यरत जन संगठनों को इस दिशा में राजनीतिक अभियान भी संचालित करना चाहिए. बढ़ते बेरोजगारों की सेना के चलते एवं रोजगार के गठते अवसरों की वजह से एक ही जाति की विभिन्न उपजातियों के बीच एवं एक ही जाति के विभिन्न तबकों के बीच असमानताएं बढ़ रही हैं. इसके फलस्वरूप दलितों में वर्गीकरण की मांग पहले से ही सामने आई है. आरक्षण की सीमितताओं के कारण एवं शासक वर्गों की कुटिल नीति के कारण इन्हें पाने वाली विभिन्न जातियों व तबकों की जनता के सामने शिक्षा, रोजगार एवं अन्य आवश्यकताओं के लिए आपस में संघर्ष करने की परिस्थितियां पैदा हो रही हैं. उत्पीड़ित वर्गों व तबकों की एकता को मजबूत करते हुए सामाजिक क्रांति को आगे बढ़ाने की दृष्टि से हमारी पार्टी को इन्हें हल करने की कोशिश करना होगा. इसलिए मलाईदार परत के लोगों के लिए संबंधित जातियों को दिए जाए वाले आरक्षण जारी रखा जाना चाहिए. मजदूर वर्ग द्वारा राज्यसत्ता हासिल करने के बाद जाति व्यवस्था के उन्मूलन के लक्ष्य से बुनियादी कार्यक्रम पर अमल करते हुए ही दलितों के सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक स्तर को विकसित करने हेतु विभिन्न रूपों में आरक्षण को जितने समय तक जरूरत पड़ती है, जारी रखना चाहिए.

वर्तमान समय में आंदोलन – दलित पैंथरों का विद्रोह

प्रतिक्रांतिकारी शासक वर्गों की आर्थिक व राजनीतिक नीतियां 1970 से दलितों एवं उत्पीड़ित जातियों के अन्य तबकों को आंदोलनों की राह में ले गयीं. दलित आंदोलनों के नेतृत्व को शासक वर्गों ने अपने में शामिल किया. वह नेतृत्व छिन्न–भिन्न हो गया. ग्रामीण इलाकों में अस्पृश्यता बेरोकटोक जारी रही. गैर आर्थिक जातिगत शोषण के रूप – वत बेगारी, बंधुवा आदि देश के कई हिस्सों में जारी थे. शहरी इलाकों में भी जातिगत भेदभाव व जातिवादी

मूलक व्यवस्था में ही समानता हासिल हो सकती है. आरक्षण मात्र राहत पहुंचाने वाले सुधारवादी नीतिगत कार्यक्रम है. न कि मुक्तिमार्ग. आरक्षण की इन सीमितताओं के बारे में, सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक असमानताओं को हमेशा के लिए अंत करने वाले मुक्ति मार्ग के बारे में हमारी पार्टी को पीड़ित जातियों एवं पीड़ित जनता के बीच व्यापक तौर पर प्रचार करने की जरूरत है.

फिर भी आरक्षण की सीमाएं जितनी भी हो, जातियों के बीच की असमानताओं को मिटाने में कुछ हद तक मदद देने के लिए ही सही उनकी आवश्यकता है. आज की शोषण मूलक व्यवस्था में आरक्षण के जरिए उत्पीड़ित जातियों विशेषकर दलितों को शिक्षण संस्थानों एवं सरकारी नौकरियों में एक हद तक अवसर मिल गए हैं. उतना ही नहीं, उच्च स्तर के व्यावसायिक पदों, जिन पर अभी भी पीड़क जातियों का एकाधिकार है, में कुछ हद तक ही सही इनके प्रवेश के लिए अवसर मिले हैं. लेकिन बहुत संख्या में दलित अपनी प्रतिभा के जरिए उच्च पदों पर जाने के बावजूद, कपटता से उनको आरक्षण कोटे में दिखा रहे हैं.

यहां एक और बात को भी हमें ध्यान में रखना चाहिए. आरक्षण की वजह से आर्थिक रूप से कुछ हद तक स्थिति सुधरने वाले परिवारों को मलाईदार परत कहते हुए उन्हें आरक्षण की सुविधा से बाहर करने का तर्क सामने आ रहा है. यह तर्क सही नहीं है. मलाईदार परत कहे जाने वाले परिवारों की आर्थिक स्थिति कुछ हद तक सुधर जाने के बावजूद समाज में वे सामाजिक समानता हासिल नहीं कर रहे हैं. विगत 25 सालों से भी ज्यादा समय से तमाम सरकारों द्वारा अमल में लाई जा रही साम्राज्यवाद निर्देशित नीतियों के कारण केन्द्र एवं राज्य सरकारों की नौकरियां दिन ब दिन कॉफी हद तक घटती जा रही है. सार्वजनिक क्षेत्र कमजोर होते हुए उसकी जगह निजी क्षेत्र कब्जा कर रहा है. इसके साथ–साथ बढ़ते आधुनिकीकरण के चलते सालाना एक करोड़ से भी ज्यादा शिक्षित युवा बेरोजगारों की सेना में शामिल हो रहे हैं. अभी तक केन्द्र एवं राज्य सरकारों के उच्च स्तर की नौकरियों के साथ–साथ विभिन्न स्तरों की नौकरियों में दलित कोटा के कई पद रिक्त हैं. जब का तब इन रिक्त पदों को जनरल कोटे के तहत भर्ती करना या रद्द

प्रतिक्रियावादी तबकों द्वारा किया गया एक प्रयास ही है, आरक्षण विरोधी आंदोलन. जनता को जातीय आधार पर बांटने के लिए शासक वर्ग उन्हें उकसा रहे हैं. यह दलितों एवं अन्य पिछड़ी जातियों के निचले तबकों को नीच व मनमर्जी ढंग से लूटने लायक मजदूरों के रूप में रखते हुए जाति व्यवस्था को स्थाई बनाने के शासक वर्गों एवं पीड़क जातीय दुरहंकारियों के प्रयास के सिवाय और कुछ नहीं है. इसीलिए इन दलित आरक्षण विरोधी आंदोलनों का हमने विरोध किया. हमें उनका विरोध करना ही होगा. हमें दलितों के साथ–साथ अन्य पिछड़ी जातियों एवं अन्य उत्पीड़ित जातियों की जनता को एकताबद्ध करना चाहिए.

हाल के समय में, आरक्षण के मामले में एक और नया रुझान उभर रहा है. राजस्थान के गुज्जर, आन्ध्र प्रदेश के कापू, गुजरात के पाटीदार, हरियाणा के जाट एवं महाराष्ट्र के मराठा लोग आंदोलन कर रहे हैं. वास्तव में इन जातियों का उच्च तबका शासक वर्गों के हिस्से के तौर पर है. जबकि वर्ग के हिसाब से इनमें से अधिकांश मध्यम वर्गीय एवं गरीब हैं. फिर भी ये जातियां समाज में सामाजिक रूप से पिछड़ी जातियां नहीं हैं. ये सामाजिक रूप से ऊंचे ओहदे रखते हैं. हालांकि इन जातियों के मध्य वर्गीय एवं गरीब लोगों की आजीविका हासिल करने के अवसरों में स्पष्ट रूप से कुछ फर्क हैं, लेकिन विभिन्न रूपों में आजीविका हासिल करने के लिए अपने सामाजिक ओहदे का इस्तेमाल करने के अवसर इनके पास मौजूद हैं. दलितों के पास सामाजिक रूप से ऐसे अवसर नहीं हैं. इसलिए जातिवार आरक्षण की इनकी मांग उचित एवं जायज नहीं है. यदि इनकी मांग का अनुमोदन करते हैं तो आधे अधूरे आरक्षण हासिल करने वाली अन्य पिछड़ी जातियों, अनुसूचित जातियों के हितों सहित अनुसूचित जन जातियों के हितों को भी विभिन्न रूपों में झटका लगेगा. आरक्षण की इन मांगों के चलते समाज में जाति के आधार पर एवं सामाजिक तबकों के आधार पर विभिन्न रूपों में जनता के बीच में झड़पें बढ़ने के हालात पैदा हो रहे हैं. अतः इनकी मांग का समर्थन नहीं करना चाहिए.

यह स्पष्ट है कि पहले से ही इन जातियों के गरीब लोगों के बच्चों की शिक्षा के लिए काफी सीमाओं के साथ ही उच्च शिक्षा के अवसर बहुत ही कम हैं. केंद्र, राज्य सरकारों द्वारा अपनायी जा रही साम्राज्यवादपरस्त एवं

शासकवर्गपरस्त नीतियों की वजह से दिन–ब–दिन जारी प्राथमिक स्तर से लेकर व्यावसायिक पढ़ाई तक शिक्षा का निजीकरण, बढ़ती महंगाई, कर भार, बढ़ती बेरोजगारी आदि के कारण गरीब जनता के बच्चों की शिक्षा के अवसर सभी स्तरों पर लुप्त होते जा रहे हैं. केंद्र, राज्य सरकारों द्वारा ऐसे लोगों को उच्च शिक्षा तक के सभी फीजों की माफी, मुफ्त में पाठ्य पुस्तक एवं छात्रावास की सुविधाओं सहित अवश्य मुफ्त शिक्षा उपलब्ध करानी चाहिए. इन तमाम जातियों को इस मांग पर आन्दोलन करने की जरूरत है. आरक्षण हासिल तमाम तबकों को इनकी मदद में खड़ा होना होगा. हमारी पार्टी ऐसे तमाम लोगों जो इस मांग पर आन्दोलन करते हैं, का समर्थन करती है और छात्रों को गोलबंद करने की कोशिश करती है. इन सभी को चाहिए कि वे हमारी पार्टी द्वारा सामने लायी जा रही इस मांग पर गंभीरतापूर्वक सोचने व आन्दोलन करने की आवश्यकता है.

जाहिर है, इन जातियों की युवाओं के साथ–साथ देश का समूचा युवा वर्ग आजीविका की समस्या का गंभीर रूप से सामना कर रहा है. यह समस्या केन्द्र, राज्य सरकारों द्वारा अमल में लाई जा रही साम्राज्यवादियों एवं शोषक शासक वर्गों के अनुकूल एवं जन विरोधी नीतियों की वजह से उत्पन्न हो रही है. इसलिए बेरोजगारी की समस्या जिसका देशव्यापी युवा सामना कर रह है, के समाधान के लिए तमाम सरकारों द्वारा अमल में लाई जा रही दिवालिया नीतियों के खिलाफ हमें जहां के वहां देशव्यापी संगठित व जुझारू संघर्षों को अपनाना चाहिए. इसी मौके पर हमारी पार्टी को उन तमाम शासक वर्गीय राजनीतिक पार्टियों का जनता के बीच में पर्दाफाश करना चाहिए जो अपने चुनावी हितों के लिए, अपने शोषक नीतियों के कारण उत्पन्न विनाशकारी परिस्थितियों से जनता विशेषकर छात्र–युवाओं का ध्यान भटकाने, अवसरवादी तरीकों में आरक्षण की इन मांगों पर सत्ता में रहते समय एक तरह का रुख एवं सत्ता में जब नहीं रहते हैं, दूसरे किस्म का रुख अपनाते हुए अपना उल्लू सीधा कर रही हैं.

समाज में अभी भी सामाजिक व आर्थिक दमन का शिकार मुसलमान एवं ईसाईयों सहित कुछ अति पिछड़ी जातियों व कबीलों की जनता उपयुक्त आरक्षण सुविधा उपलब्ध कराने की मांग को लेकर लंबे समय से संघर्ष कर

रही है. हमारी पार्टी को इनकी मांगों का समर्थन करना चाहिए. दलितों में वर्गीकरण की मांग पर भी लंबे समय से संघर्ष जारी है. लेकिन दलितों का एक तबका इस वर्गीकरण का विरोध कर रहा है. हमारी पार्टी को दलितों में वर्गीकरण की उनकी न्यायपूर्ण मांग का समर्थन करना चाहिए. जो इस मांग का विरोध कर रहे हैं, उन्हें यह समझाने का प्रयास करना चाहिए कि उनका रुख सही नहीं है और उन्हें इस मांग का समर्थन करना चाहिए.

इन आंदोलनों के उच्च स्तर के नेतागण अपने स्वार्थ हितों की पूर्ति के लिए अपने तबकों की जनता को एक दूसरे के खिलाफ खड़ा करने की कोशिश करते हुए, शासक वर्गीय पार्टियों के वोट बैंक के रूप में इस्तेमाल हो रहे हैं. इन्हें यह समझने की जरूरत है कि इन दोनों तबकों की जनता के हित परस्पर आधारित हैं, एक दूसरे के खिलाफ नहीं है. एक दूसरे की खिलाफत करने हेतु इन्हें मजबूर करने वाले शासक वर्गों की साजिशों के प्रति एवं शासक वर्गों की पिट्टुओं के रूप में इस्तेमाल होने वाले अपने नेताओं के प्रति इन्हें जागरुक होने की जरूरत है. दलित एवं अन्य उत्पीड़ित जातियों एवं उत्पीड़ित वर्गों की जनता को आरक्षण की सीमाओं के बारे में, सामाजिक पिछड़ेपन, जातिगत उत्पीड़न एवं वर्गीय उत्पीड़न के बुनियादी कारणों के बारे में, इस दुस्थिति से स्थाई रूप से बाहर आने के लिए तय किए जाने वाले सही तात्कालिक एवं दीर्घकालिक कार्यक्रम के बारे में एवं इस कार्यक्रम पर अमल करके जीत हासिल करने के लिए आवश्यक सही संघर्ष की सही दिशा के बारे में गंभीरतापूर्वक सोचने की आवश्यकता है.

दलित मुक्ति की नजर से देखा जाए तो आरक्षण नीति की काफी सीमितताएं हैं. शासक वर्गों ने दलितों में पेटि बुर्जुआ वर्ग को मजबूत करने, छोटी ही सही कुछ पकड़ रखने वाले एक उच्च वर्ग को पैदा करके अपने में समाहित करने के लिए आरक्षण का इस्तेमाल किया है. आरक्षण नीति ने दलितों में सरकार पर निर्भर करने की मानसिकता को बढ़ावा दिया. अर्द्ध उपनिवेशिक एवं अर्द्ध सामंती व्यवस्था जो जाति व्यवस्था की बुनियाद है, को खतम किए बगैर शोषण की बुनियाद पर आधारित उत्पादन के संबंधों को तोड़े बगैर सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक समानता हासिल करना असंभव है. लेकिन आरक्षण नीति ने दलित जातियों में यह भ्रम पैदा किया कि शोषण

उन्हें एकताबद्ध करके विभिन्न समस्याओं पर संघर्षों को संचालित करना संभव एवं अत्यावश्यक भी है. विशेषकर, जाति उन्मूलन के संघर्षों में उन तमाम लोगों को एकताबद्ध करने का प्रयत्न करना चाहिए. पीड़क जातियों के लोगों में मौजूद जातीय दुरहंकार एवं प्रभुत्ववादी विचारधारा के खिलाफ संघर्ष किए बगैर एवं उत्पीड़ित जातियों के लोगों में मौजूद एकांगीपन व संकीर्ण रुझान के खिलाफ संघर्ष किए बगैर तमाम उत्पीड़ित जनता को एकताबद्ध करना संभव नहीं है. इस संघर्ष में पीड़क जातीय दुरहंकार एवं जातिगत प्रभुत्ववादी विचारधारा के खिलाफ ही हमारे हमले का केन्द्रीकरण होना चाहिए.

यह चिह्नित करते हुए कि नव जनवादी क्रांति की जीत ही संपूर्ण जाति उन्मूलन के लिए भौतिक बुनियाद का निर्माण करती है, इस क्रांति की जीत हासिल करने के लिए जाति उन्मूलन संघर्ष को इसके हिस्से के तौर पर जारी रखना चाहिए.

जाति का बुनियाद एवं ऊपरी ढांचे के साथ संबंध

विभिन्न एम–एल गुटों में व्याप्त गलत समझदारी के मद्देनजर हमारी समझदारी को फिर एक बार बताने की जरूरत है.

पहले हमें यह समझना चाहिए कि जैसा कि कुछ गुट कह रहे हैं, जाति को सिर्फ ऊपरी ढांचे या बुनियाद से संबंधित कहना मार्क्सवाद विरोधी एवं यांत्रिक है. हमें यह चिह्नित करना होगा कि ब्रह्मणवादी सिद्धांत जैसे ऊपरी ढांचे से संबंधित विषय जाति के साथ जुड़े होने के बावजूद वह उत्पादन के संबंधों यानी बुनियाद का भी हिस्सा है. जैसा कि विगत में हमने उल्लेख किया है, बुनियाद में जाति की भूमिका एवं जाति आधारित सामंती प्रणाली, पूंजीवादी उत्पादन संबंधों के विकसित होने एवं राजनीतिक क्षेत्र में जारी वर्ग संघर्ष के विकसित होने के चलते घटती आई. फिर भी जब तक देश में अर्ध औपनिवेशिक व अर्ध सामंती व्यवस्था अस्तित्व में रहेगी एवं शासक वर्ग अपने शोषण व शासन के लिए जाति व्यवस्था का इस्तेमाल करेंगें तब तक बुनियाद में भी जाति की भूमिका विभिन्न रूपों में जारी रहेगी.

देश में आज ब्राह्मणवाद, हिन्दू धार्मिक दुरहंकार, पीड़क जातिगत आधिपत्य भावनाएं ऊपरी ढांचे में आधिपत्य स्थान में रहकर निरंतर इस

साथ जातिगत मित्रता पर जोर देते हुए वर्गीय एकता का विरोध करती है. दलिता जनता की मुक्ति के लिए उसके पास एक क्रमबद्ध सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक कार्यक्रम नहीं है. शोषक–शासक वर्गीय चुनावी राजनीति उसके लिए सर्वेसर्वा है. आचरण में यह दलितों व अन्य उत्पीड़ित जातियों की जनता की जनवादी आकांक्षाओं एवं मनोभावनाओं को धक्का देने वाले पीड़क जातियों एवं शासक वर्गीय पार्टियों व ताकतों के साथ मित्रता को जारी रखी हुई है. बसपा दलाल नौकरशाह पूंजीपति व सामंती शक्तियों पर आधारित पार्टियों के साथ गठबंधन करके गरीब व भूमिहीन किसानों के साथ गद्दारी की. यह पार्टी उत्तर प्रदेश में जब सत्ता में थी, अन्य शासक वर्गीय पार्टियों की तुलना में किसान क्रांतिकारी आंदोलन पर क्रूर दमन अमल करने में किसी से भी पीछे नहीं रही. किसान कार्यकर्ताओं की फर्जी मुठभेड़ों में हत्या करवाई. निजीकरण एवं कृषि अर्थ व्यवस्था पर साम्राज्यवादी शोषण के बढ़ने के लिए कारण बनी साम्राज्यवादपरस्त आर्थिक नीतियों का समर्थन करते हुए बसपा दलितों के पेटि बुर्जुआ तबकों के साथ भी गद्दारी कर रही है.

इस तरह दलितों के दलाल नौकरशाहों, शहरी पेटि बुर्जुआ वर्ग के उच्च स्तर के बुद्धिजीवियों के नेतृत्व में एवं दलाल नौकरशाही बुर्जुआ वर्ग के एक तबके की मदद से बसपा भारत के शासक वर्गों की विश्वासपूर्वक सेवा करने वाली पार्टी बन गई है. संविधान के प्रति इस पार्टी का विश्वास, संसदीय जनवाद में इसका विश्वास एवं भूमि सुधारों के बारे में हो या साम्राज्यवाद के विरोध में, उसके पास कोई कार्यक्रम का न होना, सबसे निचले स्तर की जनता के बीच आंदोलन का निर्माण करने के प्रति उसकी अनिच्छा, इन सबके चलते यह पार्टी भारत के शासक वर्गों के लिए भी स्वीकारयोग्य बन गई. यानी वह आज दलितों, बहुजनों के नाम पर भारत के शोषक–शासकों का प्रतिनिधित्व करने वाली पार्टी बन गई है. तमाम बुर्जुआ संसदीय पार्टियों के ही जैसे बसपा भी भारत की जनता की मूलभूत समस्याओं को किसी भी तरह हल नहीं कर सकती. उसके नेतृत्व की सैद्धांतिक समझदारियां, राजनीतिक रुख, उसका कार्यक्रम, पीड़क जातियों के लोगों को सीटों का बंटवारा, ब्राह्मणीय पीड़क जाति आधारित शासक वर्गीय पार्टियों के साथ उसकी अवसरवादी राजनीतिक गठजोड़ एवं उसके लंबे कार्याचरण यह साबित कर रहे हैं कि वह प्रधान

शासक वर्गीय पार्टियों जैसी ही है. देश में साम्राज्यवादियों, सामंतवादियों एवं दलाल नौकरशाह पूंजीपतियों के शोषण व उत्पीड़न को जारी रखने एवं उनके हितों की बसपा सेवा कर रही है. दरअसल, बसपा दलित एवं अन्य उत्पीडित जनता को बुर्जुआ संसदीय दलदल में घसीटते हुए उन्हें सही जनवादी संघर्षों एवं क्रांतिकारी रास्ते से भटका रही है. उसी तरह रामविलास पासवान एवं दलितों के अन्य उच्च वर्ग के नेता, शासक वर्गीय पार्टियों के दलित नेता शासक वर्गों के एजण्टों व शासक राजनीतिक व्यवस्था के एक हिस्से के रूप में रहते हुए राजनीतिक तौर पर बसपा का नेतृत्व जैसी ही भूमिका निभा रहे हैं.

दलित उच्च वर्गीय भ्रष्ट नेतृत्व द्वारा पोषित बुर्जुआ संसदवाद, सुधारवाद, कानूनवाद एवं संकीर्णतावाद दलितों की एकता को कमजोर करते हुए उनकी जुझारूपन पर पानी फेर रहे हैं. यह नेतृत्व इन्हें शासक वर्गीय पार्टियों एवं संस्थाओं की ओर धकेलते हए उन पर निर्भर होने लायक बना रहा है. उसी तरह यह नेतृत्व इन्हें राजनीतिक पैरोकारी एवं लम्पट प्रवृत्ति की ओर मोड़ रही है. इस तरह इस सड़े गले संसदीय मार्ग के जरिए व्यापक दलित गरीब जनता के हित कभी पूरे नहीं हो सकते हैं. भारत देश में दिन–ब–दिन तीखे होते प्रमुख सामाजिक अंतर विरोधों के साथ–साथ गहराता सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक संकट दलित गरीब जनता एवं दलित पेटि बुर्जुआ वर्ग के सामने ऐसे हालात निर्मित करेंगे कि वे जनवादी संघर्षों एवं असली मुक्ति मार्ग में लाने वाली परिस्थितियां और तेज हो रही हैं..

राजनीति में शामिल होकर, उच्च स्थिति में विकसित होकर शासक वर्गों का हिस्सा बने दलितों एवं शासक वर्गों के हितों की सेवा करने वाले कुछेक बुद्धिजीवियों, नौकरशाहों एवं एक बहुत ही छोटे तबके के व्यापारियों को छोड़ दें तो दलितों का अत्यधिक बहुसंख्य (90 प्रतिशत से भी ज्यादा) लोग गांवों के खेत मजदूर, गरीब किसान एवं शहरों की झोपड़पट्टियों के मेहनतकशों से संबंधित ही हैं. 2011–12 में देशभर में 29.4 प्रतिशत दलित गरीबी की चपेट में थे. अन्य पिछड़ी जातियों के 20.7 प्रतिशत एवं अनुसूचित जन जातियों में 12.5 प्रतिशत थे. 2006 के भारत सरकार की गणना के मुताबिक 1987–88 में 20.4 प्रतिशत एससी परिवारों के पास अत्यंत स्वल्प जमीन थी, जबकि 1993–94 तक वह 18.1 प्रतिशत एवं 2003 तक 9 प्रतिशत तक घट गई. देश में मौजूद 90 प्रतिशत से ज्यादा गरीब दलित मेहनतकश ही अत्यंत शोषण का शिकार हो रहे हैं. हमारे देश में विगत साढ़े तीन दशकों से भी ज्यादा समय से शासक वर्गों द्वारा अमल में लाई जा रही नई उदारवादी नीतियों की वजह से दलितों में स्पष्ट रूप से यह विभाजन हुआ. उसी तरह सामाजिक तौर पर अस्पृश्यता सहित कई रूपों में अमानवीय दमन का शिकार हो रहे हैं. (सन 2002 में एक्शन एइड द्वारा 11 राज्यों के 565 गांवों में आयोजित सर्वेक्षण ने स्पष्ट किया कि गांवों में 120 किस्म की अस्पृश्यता उल्लेखनीय स्तर पर जारी है.) इन पिछड़ी जातियों से संबंधित लोगों में वर्गीय ध्रुवीकरण न सिर्फ स्पष्ट रूप से हुआ बल्कि उनमें से उल्लेखनीय तबका भूस्वामियों, धनी किसानों, उद्योगपतियों एवं व्यापारियों में तब्दील होकर शासक वर्गों का हिस्सा बन गया. इन पिछड़ी जातियों में भी कुछ जातियां अत्यंत दयनीय स्थिति में हैं जबकि कुछ अपेक्षाकृत विकसित हैं. कुल मिलाकर देखा जाए तो इन जातियों की बहुसंख्य जनता क्रांति को चाहने वाले मेहनतकश ही हैं. लेकिन उन्हें जातियों के आधार पर नहीं बल्कि वर्गीय आधार पर संगठित करना चाहिए.

यह कहना कि पीड़क जातियों की समूची जनता शोषक वर्गों से संबंधित है, सही नहीं है. हालांकि यह कहना उचित है कि शोषक वर्ग की संरचना में अत्यधिक हिस्सा पीड़क जातियों से है, लेकिन पीड़क जातियों के सभी लोग शोषक वर्गों से नहीं हैं. पीड़क जातियों में भी उल्लेखनीय प्रतिशत नवजनवादी क्रांति में शामिल होने वाले ही हैं. बाकी जातियों की पीड़ित जनता के साथ

करनी चाहिए. दलित समस्या पर हमारी पार्टी को स्वतंत्र रूप से व्यापक बुनियाद पर मजबूत आंदोलनों का निर्माण करने की जरूरत है.

आधुनिकांतरवाद (पोस्ट मॉडर्निस्ट सिद्धांत)

कुछ दलित, पिछड़ी जातियों और आदिवासी संगठन सीधे तौर पर इस सिद्धांत की बुनियाद पर काम कर रहे हैं. यह सिद्धांत वर्गों के अस्तित्व को पहचानने से इनकार करते हुए यह कहता है कि सिर्फ समूह(आईडेण्डिटीज) ही अस्तित्व में हैं. चूंकि उत्पीड़ित जनता विभिन्न समूहों में विभाजित है, इसलिए संयुक्त संघर्ष संभव नहीं है, ऐसा सिद्धांतीकरण करता है. यह आगे कहता है कि विभिन्न समूहों को अपने हितों के लिए अलग–अलग संघर्ष करना चाहिए एवं सामूहिक रूप से तमाम उत्पीड़ित जनता को एकताबद्ध करके संघर्षों को अपनाने की जरूरत नहीं है एवं वह असंभव है. यह सिद्धांत तमाम किस्म के दमन का विरोध करता है. लेकिन दमन की निरंतरता के स्रोत के रूप में एवं दमन के वकालतदार की हैसियत से उत्पीड़ित जनता पर तीव्र दमन को अमल करने वाले शोषक–शासक वर्गों एवं उनकी राज्यसत्ता के प्रति मौनधारण करता है. इन कारणों के चलते यह रुझान भी न सिर्फ जाति उन्मूलन के मामले में कोई मदद करता है, बल्कि उत्पीड़ित वर्गों एवं जनता को एकताबद्ध होने से रोककर, वर्तमान शोषणमूलक व्यवस्था को यथावत रखने में अपने हिस्से की सेवा करता है. अब तक यह सिद्धांत अतर्राष्ट्रीय स्तर पर एवं हमारे देश में भी मार्क्सवाद को सैद्धांतिक रूप से काफी नुकसान पहुंचाया है. हमें इस सिद्धांत का विरोध करना चाहिए एवं इसका पर्दाफाश करना चाहिए. लेकिन दलितों, पिछड़ी जातियों और आदिवासियों के विभिन्न तबकें के जनता की मांगें और आकांक्षाओं को प्रतिबिंबित करने की तरह सही समय में सही संघर्ष और सांगठनिक स्वरूपों (कार्यनीति) को तय करना चाहिए. इस विषय में हमारे आंदोलन के इलाके में जहां हमें विफल हो जाते हैं और हमारे आंदोलन कमजोर पड़ी है, वहां अस्तित्व के आंदोलन उभरते हैं.

यद्यपि यह सही है कि भारत में जाति एवं वर्ग के बीच नजदीकी संबंध है, लेकिन हमें यह चिह्नित करना होगा कि जाति एवं वर्ग एक नहीं हैं. लेकिन दलितों (एससी) के मामले में काफी हद तक जाति एवं वर्ग जुड़े हुए हैं.

अध्याय–4

भारत देश के इतिहास के क्रम में वर्गों – वर्णों – जातियों के बीच का संबंध

नव जनवादी क्रांति की रणनीति एवं कार्यनीति की दृष्टि से वर्ग – जाति के बीच के संबंध के बारे में सही सैद्धांतिक समझदारी रखना अत्यंत महत्वपूर्ण विषय है. इसीलिए पहले के तीन अध्यायों में अलग–अलग सामाजिक अवस्थाओं में वर्गों–वर्णों–जातियों की उत्पत्ति, विकास, बदलावों के बारे में बताया गया है. इस परिप्रेक्ष्य में उनके बीच के संबंध का अब अवलोकन करेंगे. उसी तरह आज के समाज में मौजूद इस संबंध का ठोस विश्लेषण करेंगे.

सिंधू घाटी सभ्यता काल

भारत देश में प्राथमिक स्तर पर ईसा पूर्व 2000 के पहले सिंधु घाटी सभ्यता के काल में वर्गों का उद्भव हुआ था. फिर भी हमें यह जानकारी नहीं है कि ये वर्ग स्वजातीय विवाह पद्धति 'एण्डोगमी' वाले विरासती झुण्डों के रूप में थे. इसलिए जातियों या जातियों के विभिन्न रूपों को वैदिक पूर्व काल में चिह्नित नहीं कर सकते.

वर्ण व्यवस्था का काल

ईसा पूर्व 1500–500 के बीच के आर्यों के प्रवेश के बाद के काल में ही वर्ग की पहली अभिव्यक्ति के रूप में वर्ण दिखता है. उसके उपरांत के समयकाल में स्थापित जाति व्यवस्था की जड़ इसमें ही मौजूद हैं. आर्य गण और मूल द्रविड सभ्यताओं–गणों के बीच जारी झड़पें व सम्मिश्रणों के लंबे क्रम के जरिए रिश्तों के संबंधों के टूटने की वजह से एवं कृषि के विकास की वजह से उस काल में वर्णों, जो वर्गों के ठोस रूप थे, का उद्भव हुआ. हालांकि आज जिस रूप में हमें जातियां दिखाई देती हैं, उसी रूप में उस समय के वर्ण नहीं थे, लेकिन सामाजिक विकास के क्रम में वर्णों से जातियों का आविर्भाव हुआ.

ईसा पूर्व 7वीं सदी में वर्गों के रूप में मौजूद दो अग्र वर्ण क्षत्रिय एवं ब्राह्मणों पर आधारित होकर कबीलों का कुलीन तंत्र गठित हुआ. इसने वैश्यों (विश) एवं शूद्रों को नियंत्रित किया. यद्यपि राज्यसत्ता का अस्तित्व में आना बाकी था, इसके बावजूद वर्ण व्यवस्था ने नियंत्रण एवं आचार संहिता बनाई. इस तरह वर्ग और वर्ण इस काल में जुड़े हुए थे.

शुरुआती सामंती राज्यः

करीबन ईसा पूर्व 500 साल से सामंतवाद की तरह के राज्य के उद्भव एवं विकास के साथ ही वर्ग एवं वर्ण के बीच का संबंध भी बदल गया. विभिन्न वर्णों में वर्ग विभाजन शुरू हुआ. ब्राह्मण प्रशासनिक जिम्मेदारियों को निभाने के अलावा व्यापारियों में भी तब्दील हो गए. वैश्यों में से व्यापारी, संपन्न भूस्वामी एवं कुशल मजदूर बन गए. खेत मजदूरों में तब्दील होने के चलते शूद्रों के लक्षणों में बदलाव आया. उस तरह विगत में वर्ण एवं वर्ग के बीच में जितना नजदीकी संबंध था, उतना नहीं रह गया. इस शुरुआती सामंती राज्य में क्षत्रिय, ब्राह्मण एवं वैश्य वर्ण के उच्च स्तर के लोग शासक वर्ग के रूप में थे. उस तरह वैश्यों का एक तबका शासक वर्ग का हिस्सा बना. जबकि एक और तबका शासित वर्ग में सम्मिलित हो गया.

हमें यहां एक और बात याद रखना होगा कि यह वर्ण व्यवस्था तब तक जाति व्यवस्था में तब्दील नहीं हुई थी. एक वर्ण से दूसरे वर्ण में बदलना कुछ हद तक संभव था. उसके बाद की अवस्था में ही जातियां बनकर, विस्तारित होते हुए संगठित हुई.

ब्राह्मणीय जाति आधारित सामंतवादः

करीबन सन् चौथी सदी से अस्तित्व में आई जाति आधारित सामंती प्रणाली के साथ भारत देश में जाति व्यवस्था का गठन हुआ. सामंतवाद के विस्तार के साथ ही स्वजातीय विवाह पद्धति के तहत पेशों को अपनाने वाले कबीले स्वयंपोषक ग्राम समुदायों का हिस्सा बन गए. वे शूद्र या बढ़ते अति–शूद्र (अछूत) माने जाने लगे. शहरों तक सीमित वैश्यों का एक तबका व्यापारी वर्ग के रूप में एवं मुख्यतः ग्रामीण इलाकों में जीवनयापन करने वाले अधिकांश लोग शूद्रों के रूप में पहचाने गए. विदेशी आक्रमणकारियों एवं

रहे हैं कि देश में वर्ग व्यवस्था ने अपने खुद का अस्तित्व खो दिया है और जाति अधीन वर्ग व्यवस्था में तब्दील हो गई है एवं यहां के मार्क्सवादियों ने मार्क्सवाद को महज वर्ग अपचयवाद में तब्दील किया है. वे यह कह रहे हैं कि वर्तमान में जाति विरोधी संघर्ष को अपनाना ही क्रांतिकारियों का तात्कालिक कार्यभार है एवं कम्युनिस्ट आंदोलन की विफलता का कारण है, इसे चिह्नित न करना.

इतना ही नहीं, वे यह तर्क कर रहे हैं कि भारत में क्रांति की विजय के लिए 'नई तरह की मजदूर वर्गीय पार्टी' का निर्माण किया जाए एवं उसमें पीड़क जातियों से आए कॉमरेडों के उच्च स्तर की कमेटियों में प्रवेश पर प्रतिबंध लगा दिया जाए. अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जन जातियों से संबंधित लोगों से देशाध्यक्ष को चुनने से जातिवाद कुछ हद तक धुल जाएगा, इस मत का विरोध करना जातिवाद होगा, ऐसे अजीबोगरीब तर्कों को ये प्रचार में ला रहे हैं. ये लोग यह कहते हुए कि दमित जातियों की जनता का प्रधान दुश्मन पीड़क जातियां हैं, उन्हें असली दुश्मन एवं असली मित्रों के बारे में अनजाने में रखते हुए वर्ग संघर्ष को भटका रहे हैं. वे यह कहते हुए कि आज के शोषणमूलक व्यवस्था के दायरे में ही सामाजिक संघर्ष के नाम से जारी सुधारवादी आंदोलनों के जरिए एवं संसदीय मार्ग के जरिए जाति उन्मूलन संभव है, उत्पीड़ित जनता में शोषणमूलक व्यवस्था के प्रति भ्रम पैदा कर रहे हैं.

हाल ही के समय में, शासक व्यवस्था के प्रति जनता में बढ़ते तीव्र असंतोष को भटकाकर सुधारवाद में डुबोने, संसदीय मार्ग में ले जाने अवसरवादी ढंग से सीपीआई(एम) नील झण्डा एवं लाल झंडे (आंबेडकरवाद एवं मार्क्सवाद) को साथ में लेकर पदयात्रा आयोजित करके तेलंगाना में दलितों के वोट लूटने का प्रयास कर रही है. और कुछ लोग नील सलाम, लाल सलाम के नाम पर आंबेडकरवाद एवं मार्क्सवाद को मिलाने की कोशिश कर रहे हैं. इन तमाम बुर्जुआ एवं पेटि बुर्जुआ रुझान जैसा कि ऊपर कहा गया है, दलित समस्या के समाधान नहीं हैं. इन गलत रुझानों के खिलाफ सैद्धांतिक संघर्ष को जारी रखना चाहिए. साथ ही ब्राह्मणीय हिन्दू धर्मोन्माद एवं पीड़क जातीय दुरहंकार के खिलाफ जारी संघर्ष में कार्यनीतिक तौर पर इनमें मौजूद सकारात्मक शक्तियों के साथ मिलकर काम करने की कोशिश

पहला – चूंकि जाति केवल ऊपरी ढांचे से संबंधित मामला है, इसलिए ऊपरी ढांचे से संबंधित बाकी मामलों के जैसे ही जाति का भी सामाजिक व्यवस्था में बदलाव के बाद ही उन्मूलन होता है. इसलिए इनका तर्क यह है कि आज जाति उन्मूलन से संबंधित कार्यक्रम (आंदोलन) अपनाने की जरूरत नहीं है एवं अपनाने से भी उनसे कोई फायदा नहीं होता है. यह यांत्रिक समझदारी है. यह तर्क करने वाले कुछ एम–एल गुट यह कहते हैं कि स्पष्ट वर्गीय मांगों पर ही संघर्ष करना चाहिए. यहां यह जाहिर है कि वे भारत की ठोस परिस्थितियों को सही तरीके से समझे नहीं हैं, यांत्रिक समझदारी के साथ जाति उन्मूलन के संघर्षों को क्रांति के बाद की अवस्था के लिए स्थगित कर रहे हैं. उनका यह रुझान तमाम उत्पीड़ित जनता को एकताबद्ध करने में कोई मदद नहीं करेगा. उल्टे आचरण में दमित जातियों को कम्युनिस्टों के खिलाफ खड़ा करने में शासक वर्गों की मदद करेगा.

इससे भिन्न एक और गलत रुझान – जाति एवं वर्ग के बीच के अंतर को न देखकर जाति संघर्ष को ही वर्ग संघर्ष के रूप में गलत व्याख्या करता है. कुछ एम–एल गुट सतही तौर पर यह कहते हैं कि वर्ग संघर्ष ही प्रधान है, लेकिन वे इस गैर मार्क्सवादी तर्क कि जाति विमुक्ति के बगैर वर्ग विमुक्ति संभव नहीं है, के साथ वर्ग संघर्ष पर पानी फेरते हुए शुद्ध अवसरवादी तरीके से जातिगत संगठनों का गठन कर रहे हैं एवं जातीय संघर्ष को ही सर्वेसर्वा मान रहे हैं.

कुछ लोग मार्क्सवाद को एवं कुछ और लोग मार्क्सवाद–आंबेडकरवाद को भारत की ठोस परिस्थितियों के साथ सृजनात्मक ढंग से कार्यान्वयन करने की घोषणा करते हुए, 'अस्तित्व वादी सप्तवर्ग गठजोड' के सिद्धांत के नाम पर वर्ग अस्तित्व को पूरी तरह निषेध करते हुए जातिगत क्रांति को सामने ला रहे हैं. इस सिद्धांत के अनुरूप राजनीतिक क्षेत्र में संसदीय मार्ग द्वारा वर्तमान सामाजिक व्यवस्था में ही दलित बहुजन आईडेण्टिटी अलयन्स (दलित बहुजनों का अस्तित्व गठजोड़) की सत्ता को प्रस्तावित कर रहे हैं. ये कथनी में जाति–वर्ग संघर्ष की बात करते हैं एवं करनी में वर्ग संघर्ष से पल्ला झाड़ते हुए तथाकथित पीड़क जातियों के खिलाफ पिछड़ी व दलित जातियों को खड़ा करने के जातिगत क्रांति का नारा दे रहे हैं. ये लोग यह सिद्धांतीकरण कर

शासक वर्गों में शामिल शूद्रों को क्षत्रिय जाति का स्तर उपलब्ध कराया गया. ब्राह्मणों ने पुरोहितों की जिम्मेदारियां निभाने के साथ–साथ भूस्वामियों के रूप में अपना स्थान सुदृढ़ बनाया.

इसी काल में कई जातियां विकसित होकर स्वयंपोषक ग्रामीण अर्थ व्यवस्था में स्वजातीय विवाह पद्धति के साथ अलग पेशा करते हुए संगठित हुई. एक व्यक्ति की पहचान के लिए हो या सामाजिक, आर्थिक अंतःसंबंध के लिए, ये जातियां ही प्रधान इकाई के रूप में मान ली गयी. सामंतवाद के विकास के क्रम में असंख्य जातियां बढ़ गईं. ये पहले की अवस्था के वर्णों से भिन्न थे. शासक वर्गों ने इन्हें वर्ण व्यवस्था के दायरे में बांध दिया था. उतना ही नहीं, शासक वर्गों में शामिल नए लोगों को पीड़क वर्ण सिद्धांत के अनुरूप उचित स्तर उपलब्ध कराया गया था. इस तरह वर्णों का स्वगोत्रीय संबंधी समूहों के रूप में रहना खतम होकर उसके बदले में वे असल में स्वगोत्रीय विवाह पद्धति का पालन करने वाले पेशों के समूह के रूप में मौजूद एक–एक जाति के स्तर के प्रतीक बन गए.

वर्ग–जाति के बीच का संबंध इस तरह इस काल में काफी हद तक पुनः प्रतिष्ठित होकर मजबूत हुआ. जाति व्यवस्था के और मजबूत होने के चलते एक जाति से संबंधित सदस्यों को उनके लिए आबंटित पेशे को छोड़कर दूसरे पेशे को अपनाने से रोकने के कड़क नियम–कायदे अमल में लाए गए. इस तरह एक व्यक्ति की जाति एवं पेशा यानी उत्पादन के संबंधों में उनका स्थान उनकी पैदाइश से ही निर्धारित होकर मौत तक बिना किसी बदलाव के जारी रहती थी. एक ठोस वर्ग उदाहरण के लिए किसान विभिन्न जातियों के समूह के रूप में था. लेकिन एक जाति हमेशा एक ही वर्ग में उदाहरण के लिए ग्रामसेवक, खेत मजदूर, कुशल श्रमिक, किसान, व्यापारी, पुरोहित, दलाल एवं अधिकारी वगैरह का हिस्सा बनी रहती.

जाति एवं वर्ग के बीच का संबंध मुख्यतः स्वयपोषक ग्राम समुदायों के स्तर पर मजबूत होने के बावजूद शासक वर्गों के लिए यह लागू नहीं होता था. हालांकि ब्राह्मण एवं क्षत्रिय ही प्रधानतया शासक वर्ग थे, लेकिन आक्रमणों के जरिए अन्य जातियों के सदस्य या विदेशी आक्रमणकारी, शासक वर्गों का

हिस्सा बनते थे. इनमें से कुछ लोगों (मुख्यतः उत्तर भारत में) के द्वारा क्षत्रिय स्तर स्वीकार करने के बावजूद अन्य लोग अपने पूर्व के शूद्र स्तर में या मुसलमानों के रूप में ही रहे. फिर भी कुल मिलाकर जाति व्यवस्था में खास बदलाव नहीं आए. सच में, समूची सामंती अवस्था में शासक वर्गों ने अपने शोषण व वर्ग शासन को सुदृढ़ करने के लिए जाति का पूरी तरह इस्तेमाल किया.

औपनिवेशिक एवं अर्द्ध सामंती प्रणालीः

अपने शोषण व शासन के अनुरूप जाति व्यवस्था का जिस तरह पहले के शासक वर्गों ने इस्तेमाल किया था, उपनिवेशवादियों ने भी ठीक उसी तरह की नीति जारी रखी. उन बदलावों जो औपनिवेशिक शासन के पहले ही हो रहे थे, की वजह से एवं 19वीं सदी में औपनिवेशिक शोषण एवं शासन के चलते उत्पन्न आर्थिक बदलावों के चलते जाति आधारित सामंती व्यवस्था में उल्लेखनीय बदलाव हुए थे. नए वर्गों की उत्पत्ति एवं विभिन्न जातियों के बीच के वर्ग विभाजन ने जाति एवं वर्ग के बीच के संबंधों में बदलाव लाए. इस अवस्था से जाति एवं वर्ग के बीच का समान संबंध घटता आया.

अंग्रेजों द्वारा भारत को उपनिवेश में तब्दील करने के पहले मुगलों के शासन में व्यापार एवं शहरों का विकास फिर से उच्च स्तर पर पहुंच गए थे. नया व्यापारी वर्ग पैदा हुआ. इस राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग जब बाल्यावस्था में ही था, औपनिवेशिक शोषकों द्वारा उसका गला घोंट दिया गया. अंग्रेजों के जमाने में ही आधुनिक मजदूर वर्ग का जन्म हुआ. उसी तरह दलाल पूंजीपति वर्ग भी पैदा हुआ. साम्राज्यवादियों ने ही उसका पालन पोषण किया. किसानों में भी धीरे–धीरे वर्ग विभाजन होता आया. इस काल से ही जाति एवं वर्ग के बीच का समान संबंध और भी घटता आया. क्योंकि शूद्र स्तर के किसान एवं दस्तकार जातियों के लोग कारखाना मजदूर बन गए.

दलितों जो एक जमाने के अति शूद्र व अछूत थे, को बड़े पैमाने पर सेना, रेल्वे, सड़क निर्माण, कारखानों एवं अकुशल कार्यों में भर्ती किया गया था. दलित एवं आदिवासी खदानों व प्लांटेशनों में भी काम करने लगे थे. इन सबको मिलाकर आधुनिक मजदूर वर्ग गठित हुआ.

हासिल करने की समस्या को 'जोतने वाले को जमीन' नारे के साथ नहीं जोड़ी.

मजदूर, किसान एकता की बुनियाद पर तमाम प्रगतिशील जनवादी शक्तियों विशेषकर सामंतवादी विरोधी शक्तियों के साथ उसने संयुक्त मोर्चा का निर्माण नहीं किया. वह दलाल पूंजीपति वर्ग का पिछलग्गू बन गयी. लेकिन सीपीआई के कैडरों ने स्थानीय स्तर पर जाति समस्या को लेकर काम किया था. इसलिए कुछ इलाकों में मजबूत वर्गीय एकता एवं मजदूर किसान की मित्रता पर आधारित संयुक्त मोर्चा संगठन गठित हुए. उस हेतु कईयों ने जान की कुरबानी दी. इसी बुनियाद ने भविष्य के क्रांतिकारी संघर्षों के उभरने में मदद दी. कुछ कैडरों ने अस्पृश्यता के खिलाफ तमाम प्रगतिशील जनवादी शक्तियों को शामिल करते हुए एक गठबंधन बनाने की भावना को सामने लाए थे. लेकिन सीपीआई के नेतृत्व में कठमुल्लावाद एवं यांत्रिक सोच के हावी होने के कारण सही बुनियाद पर संयुक्त मोर्चा का निर्माण करने में सीपीआई विफल रही. 1952 से लेकर नक्सलबाड़ी तक एवं उसके बाद भी जाति के सवाल के प्रति सीपीआई का रुख बुनियादी तौर पर यही था. सीपीआई(एम) भी मौलिक रूप से इसी रुख के साथ है. इन संशोधनवादी एवं नव संशोधनवादी पार्टियों के लिए चुनाव एवं अवसरवादी संसदीय गठजोड़ ही सर्वेसर्वा है. इसलिए इसके अनुरूप ही जाति सवाल पर दलित जन समुदायों को आकर्षित करने के लिए आवश्यक सभी नाटक इन पार्टियों के नेता खेल रहे हैं. अस्पृश्यता एवं जातिगत उत्पीड़न के समाधान के लिए बुर्जुआ संसदीय कानूनों पर निर्भर होकर एवं अर्थवादी दृष्टिकोण के साथ जब तब सरकारों को मांग पत्र सौंपने के लिए दलित जनता को गोलबंद करते हुए उनके जुझारूपन पर पानी फेर रहे हैं. इस तरह जाति के सवाल पर दोनों ही संशोधनवादी पार्टियां व्यवहार में बुर्जुआ लाईन पर ही अमल कर रहे हैं.

आज के गलत रुझान

ऐसे लोगों जो यह घोषणा करते हैं कि वे मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओवाद का अनुसरण कर रहे हैं, में भी आज जाति के उन्मूलन के बारे में मुख्यतः दो गलत रुझान जाहिर हो रहे हैं.

और बढ़ाती है. व्यापक जनसमुदायों के चेतना को बढ़ाते हुए क्रांति का प्रभावशाली ढंग से नेतृत्व प्रदान करती है.

बाह्मवाद–विरोधी वैचारिक राजनीतिक संघर्षों के विभिन्न धाराओं में जाति उन्मूलन के लिए हो रहे संघर्ष बहुत ही महत्वपूर्ण है. क्योंकि यह भारतीय समाज के उत्पादन संबंधों का अभिन्न अंग के रूप में रहते हुए ऊपरी ढांचे में आधिपत्य भूमिका अदा करती है. बाद के अध्यायों में इस पर नजर डालते हैं.

अध्याय–5

जाति उन्मूलन पर विभिन्न गलत रुझान

जाति के सवाल पर अविभाजित भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (सीपीआई) की समझदारी

सीपीआई भारत की जाति समस्या को ठीक से समझ नहीं पायी. उसने जातिगत भेदभाव एवं असमानता की समस्याओं, जो ऊपरी ढांचे का हिस्सा हैं, के खिलाफ एवं ब्राह्मणीय विचारधारा के खिलाफ संघर्ष को महत्व नहीं दिया. उतना ही नहीं, उत्पादन के क्षेत्र में यानी बुनियाद में भी जाति मौजूद है, इस विषय को भी नहीं समझी.

सीपीआई ने सिर्फ साम्राज्यवाद को ही लक्ष्य बनाया था. लेकिन सामंती एवं दलाल पूंजीपति वर्गों के साथ साम्राज्यवाद की सांठगांठ एवं भारत को पिछड़ी अवस्था में ही रखने वाली जाति व्यवस्था सहित तमाम अप्रासंगिक बने पुरानी व्यवस्थाओं को केवल अपनी जरूरतों के मुताबिक ही बदलने वाले साम्राज्यवादियों एवं पूंजीवादियों के हितों को वह देख न सकी.

ब्रिटिश उपनिवेशवाद के खिलाफ जारी स्वतंत्रता आंदोलन में छोटे, भूमिहीन किसानों एवं खेत मजदूरों के हितों को प्राथमिकता देने वाली किसान गोलबंदी को सीपीआई ने महत्व नहीं दिया. सामंतवाद के साथ–साथ जाति व्यवस्था को भी खत्म करने के रास्ते को सुगम बनाने वाली राजसत्ता को

ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं मुसलमानों से, वैश्यों जो व्यापारी जातियों के थे, में से एवं एक जमाने के शूद्रों से भी व्यापारी एवं सूदखोर बन गए.

पारसी, जैन एवं कटिया (यानी क्षत्रिय जाति), बनिया जैसी व्यापारी जातियों एवं धर्मों से दलाल व्यापारिक संस्थाएं बन गई. ब्राह्मणों एवं एक जमाने के शूद्र जातियों से भी कुछ व्यापारिक संस्थाओं का गठन हुआ.

ब्राह्मणों, कायस्थों, आंग्लो इंडियन, पारसी एवं मुसलमानों के शिक्षित उच्च वर्गों ने प्रशासनिक तंत्र पर आधिपत्य हासिल किया.

अंग्रेजों ने भी भूस्वामियों (जो वतनदार एवं ईनामदार नहीं थे), जागीरदार एवं मजदूर वर्गों को कानून सम्मत बनाया. जमीनदार, खोतेदार एवं ताल्लुकदार ज्यादातर अग्र वर्णों से ही संबंधित थे. जागीरदारों के रूप में घोषित छोटे भूस्वामी एवं धनी किसान एक जमाने की शूद्र जातियों से आए हुए थे. भूमिहीन किसानों एवं खेत मजदूरों का अत्यधिक हिस्सा अति शूद्र, आदिवासी एवं घुमंतू कबीलों से संबंधित थे. दरिद्रता का शिकार शूद्र किसानों का एक बड़ा तबका भी भूमिहीन किसानों व खेत मजदूरों में तब्दील हुआ था.

इस अवस्था में उभरे नए वर्ग इस तरह कई जातियों वाले थे. विशेषकर प्रधानतया पिछड़ी जातियों के गरीबों व दलितों को मिलाकर आधुनिक मजदूर वर्ग का जन्म हुआ. यहां अत्यंत महत्वपूर्ण बदलाव यह है कि पहले की अवस्था में एक वर्ग के रूप में मौजूद कई जातियां उसी स्थिति में नहीं रह गईं. वर्ग विभाजन ने जातियों को विभाजित करके विभिन्न वर्गों में अलग–थलग किया. विशेषकर शूद्र जातियों के छोटे ही सही प्रभावशाली तबकें, शासक वर्गों में अपना स्थान कायम करने की स्थिति में पहुंच गए. कई जातियों के कुछेक पेटि बुर्जुआ तबकें मजदूर वर्ग का हिस्सा बन गए. इसी तरह पीड़क जातियों में कुछ तबकें मजदूर बने.

फिर भी कुल मिलाकर देखने से यह स्पष्ट होता है कि उत्पादन के साधनों पर स्वामित्व एवं आधिपत्य के साथ शासक वर्गों में प्रधान भगीदार के रूप में मुख्यतया पीड़क जातियों के ही लोग थे. दूसरी ओर दलितों में 90 प्रतिशत से भी ज्यादा लोग खेत मजदूर, गरीब किसान एवं मजदूर थे.

अर्धऔपनिवेशिक, अर्धसामंती प्रणालीः 1947 के बाद के काल में

भारत, विशेषकर ग्रामीण भारत में और भी कई बदलाव हुए. पूंजीवादी उत्पादन संबंधों के विस्तार के साथ ही एवं जनांदोलनों के झटकों से अर्द्ध औपनिवेशिक व अर्द्ध सामंती भारत में जाति एवं वर्ग के बीच के संबंध नए रूप धारण कर लिये. विशेषकर ग्रामीण इलाकों में ब्राह्मण एवं क्षत्रिय जातियों का आधिपत्य शिथिल पड़ गया. एक जमाने के शूद्र वर्ण की पीड़क जातियां उस जगह पर काबिज हुईं. आज के ग्रामीण इलाकों के शासक पीड़क वर्गों में ब्राह्मण, राजपूत, भूमिहार आदि जातियों के अलावा लिंगायत, ओक्कालिगा, वेल्लाल, कम्मा, रेड्डी, पटेल, मराठा, कुनबी, जाट, यादव, कुर्मी आदि भी शामिल हैं.

इनका उल्लेखनीय हिस्सा धनी एवं मध्यम वर्गीय किसान हैं, जबकि कुछ लोग काश्तकार एवं गरीब किसान के रूप में हैं. पिछड़ी जातियों के करीब आधे लोग खेत मजदूर एवं गरीब किसान हैं, जबकि बाकी का अधिकांश हिस्सा मध्यम व धनी किसान एवं कुछेक जमींदार हैं. दलितों का अत्यधिक हिस्सा खेत मजदूर एवं भूमिहीन गरीब किसान हैं. कुछ लोग मध्यम किसान वर्ग के हैं. उससे ऊपर की श्रेणी के लोग बहुत कम हैं. इस तरह दलित आज भी उत्पीड़ित वर्ग के ही रूप में जीवनयापन कर रहे हैं.

इस तरह आज वर्ग एवं जाति के बीच का समान संबंध और भी घट गया है. करीबन सभी जातियां कई वर्गों की संरचना में तब्दील हो गईं. हालांकि जाति आधारित सामंतवाद कमजोर होने के बावजूद मौजूदा सामंती संबंधों के चलते एवं इन संबंधों को जारी रखने में निहित शासक वर्गों व साम्राज्यवादियों के हितों की दृष्टि से जाति व्यवस्था नए रूपों में अब भी मजबूत हो रहा है.

शासक वर्गों की चुनावी राजनीति की जरूरतों एवं हिन्दू धर्मोंन्मादियों की बढोत्तरी ने जाति व्यवस्था को विभिन्न रूपों में नई सांसें दी. जाति व्यवस्था का इस्तेमाल करके अपने नेतृत्व में जातियों पर आधारित बहुवर्गीय संस्थाओं का निर्माण करने शासक वर्ग कोशिश कर रहे हैं. पेटिबुर्जुआ के नेतृत्व में कुछ उत्पीड़ित जातियों के संस्थाएं भी अस्तित्व में आयी हैं. इस पूरे क्रम को संश्लेषित करने से मौजूदा ब्राह्मणवादी सिद्धांत का सारांश को कुछ इस तरह परिभाषित किया जा सकता है.

ब्राह्मणवाद का सिद्धांत है श्रेणीबद्ध असमानता, आधिपत्य और उत्पीड़न.

यह स्वातंत्र, समता और भाईचारा को निषेध करता है. इसकी जड़ हजारों सालों के वेद काल में रही हैं. लेकिन जिस शोषक वर्ग का आविर्भाव होकर, उसका अधिकार स्थापित किया जाता है, उस वर्ग की जरूरतों के अनुसार उसका पुनरनिर्माण के साथ उसे संरक्षित करता आया है. आज ब्राह्मणवाद भारत देश के दलाल नौकरशाह पूंजीपति एवं सामंती शासक वर्गों के समस्त तबाकों का विश्व दृष्टिकोण का और मूल्य व्यवस्था का मूल–केंद्र बना हुआ है. उसका श्रेणीबद्ध आधिपत्य और न्यूनता का दृष्टिकोण कमोबेश हर जाति और धार्मिक समुदायों को संरक्षित और प्रभावित कर रहा है. यह भारत के समाज में जमा होकर प्रतिघाती मूल्यों और संबंधों को बढ़ावा दे रहा है.

ब्राह्मणवाद शारीरिक श्रम को नीचा दिखाता है. जातीय व्यवस्था दलितों को अमानवीय ब्राह्मणीय विचारधारा के बुनियाद पर बनी हुई दूभर स्थिति में धकेलते हुए जाति के आधार पर श्रमिकों को विभाजित किया जाता है. महिला–विरोधी दृष्टिकोण, उत्पीड़क संबंध और आदतें इस सिद्धांत में अभिन्न पहलू हैं. यह आदिवासी जनता के प्रति आधिपत्य और द्वेष, राष्ट्रीयताओं के प्रति भेदभाव और धार्मिक अल्पसंख्यकों पर विशेषकर मुस्लिमों पर धार्मिक उन्मादपूर्ण रवैये से शत्रुता को प्रोत्साहित करती है. भारतीय राजसत्ता की प्रतिघाती 'अखंड राष्ट्र' के लिए यही सैद्धांतिक आधार प्रदान करता है. भारत देश में कई राष्ट्रीयताओं के जायज आत्मनिर्णय अधिकारों को यह नकारता है। इसका भाववाद से अत्यंत घोर अंधविश्वास और तर्कहीन विचार पनपते हैं, प्रधानतया जन्म से ही महान है या अल्प है के अंतर पैदा किए जाते हैं।

उपरोक्त परिप्रेक्ष्य में ही मजदूर वर्गीय पार्टी जातीय दमन का प्रतिरोध करते हुए, जाति व्यवस्था को खतम करने वाले वैकल्पिक कार्यक्रम की रूपरेखा तय करती है.

नवजनवादी क्रांति के चरण से लेकर समाजवाद (सोशलिज्म) से होते हुए साम्यवाद (कम्युनिज्म) में जाने वाले सफर के पूरे क्रम में सर्वहारा पार्टी के नेतृत्व में हो रही क्रांति के तमाम चरणों में इस खतरनाक सिद्धांत का पर्दाफाश कर, वैचारिक क्षेत्र में उसे उखाड़ने के लिए शक्तिशाली संघर्ष करना है. वैचारिक क्षेत्र में ब्राह्मणवादी –विरोधी आंदोलन और बुर्जुआ–विरोधी आंदोलन को स्थिरता से संचालित करने ध्वारा ही सर्वहारा पार्टी अपनी वर्ग चेतना को

में प्रणय की हत्या घटना इसी तरह की थी. उत्तर प्रदेश में खाप पंचायतों के नाम पर दलितों को बहिष्कार करना बड़े पैमाने पर जारी है. आंध्रप्रदेश में रेती माफिया को विरोध करने और जमींदार के आम बगावन में फल तोड़ने का बहाना बनाकर, इन आधिपत्य शक्तियों के प्रोत्साहन से पुलिस अधिकारी दलित युवकों के शिर के बाल मुंडन कर अपमानित किए गए. और आंबेडकर की मूर्ति प्रतिष्ठापन का विरोध करना, आंबेडकर के मूर्तियों को तोड़ना जैसे विध्वंसक कार्रवइयों में उतारने वाले पीड़क जाति दुरहंकारों को और उनका समर्थन देने वाली अराजक शक्तियों का सामना करने के कारण दलितों पर हमले किए गए. इसी बीच में दलित पवित्र मानने वाले रविदास मंदिर को हिंदू धर्मोन्मादियों द्वारा ढाह दिया गया. इस तरह मोदी सत्तासीन होने के बाद देशभर में दलितों पर हमले और तेज होता जा रहा है. लेकिन केंद्र व राज्य सरकारों में सत्तासीन इन ब्राह्मणीय हिंदुत्व शासक वर्गों ने अपने शासन में दलितों, अल्पसंख्यकों और महिलाओं पर अपराधों की संख्या घटने की झूठी बातें संसद और विधानसभाओं में कर रहे हैं.

इन परिस्थितियों में, दलितों के उद्धार के लिए ही अपने आविर्भाव होने की बात कहने वाली बहुजन समाज पार्टी जैसी शासक वर्गीय अनुकूल पार्टियां एवं कई अवसरवादी संस्थाएं सामने आ रही हैं. एक तरफ दलित जनता में व्याप्त असहाय स्थिति एवं दूसरी ओर उनमें बढ़ती चेतना, अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करने के दृढ़ निश्चय का फायदा उठाकर उन्हें सुधारवादी रास्ते में भटकाने के लिए ये पार्टियां कोशिश कर रही हैं. कांग्रेस एवं भाजपा जातीय महा सम्मेलनों का आयोजन करके उन्हें अपने मातहत रखने की कोशिश कर रही हैं, जोकि पहले नहीं हुआ करता था. इस तरह के शासकवर्गीय अनुकूल अवसरवादी नेतृत्व को दलित और पिछड़ी जातियों की जनता से अलग–थलग किए बगैर सामाजिक क्रांति को सफल नहीं बना सकते हैं. इसलिए जाति उन्मूलन के संघर्ष को वर्ग संघर्ष का हिस्सा बनाकर सामाजिक उत्पीड़न से ही नहीं आर्थिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक उत्पीड़न से मुक्ति के मार्ग में भी उत्पीड़ित जनता को सही दिशा में आगे बढ़ा सकते हैं.

ऐसे इलाकों में भी जहां वर्ग संघर्ष तेज है, जाति समस्या के हल के लिए ठोस कार्यक्रम तय करके, उस पर विशेष रूप से केन्द्रित करके काम करने की

शोषणमूलक व्यवस्था के अस्तित्व के लिए मदद पहुंचा रहे हैं. उसी समय इसी बुनियाद से ब्राह्मणवाद, हिन्दू धार्मिक दुरहंकार एवं पीड़क जातिगत आधिपत्य का विरोध करते हुए, उनका मुकाबला करते हुए असल में इस बुनियाद के आमूलचूल परिवर्तन करने वाले वैज्ञानिक, प्रगतिशील, जनवादी, पुरोगामी एवं क्रांतिकारी विचारधारा, राजनीति एवं इनका प्रतिनिधित्व करनेवाली शक्तियां, इनके संगठन एवं वर्ग संघर्ष ऊपरी ढांचे में उभर रहे हैं. ये आज की अप्रासंगिक व पुरानी पड़ गई बुनियाद को कायम रखने वाली शक्तियों को उखाड़ फेंककर, इस बुनियाद को ध्वस्त करने के वर्ग संघर्ष को ऊपरी ढांचे के तमाम मामलों में जारी रखी हुई हैं. आज एक ही बुनियाद पर आधारित होकर अस्तित्व में रही परस्पर विरुद्ध शक्तियां ऊपरी ढांचे के क्षेत्र में आपस में तीखा संघर्ष कर रहे हैं. इसमें विचारधारात्मक व राजनीतिक क्षेत्र में जारी संघर्ष प्रधान, महत्वपूर्ण व निर्णायक है. इसका विरोध करते हुए, समाज में क्रांतिकारी परिवर्तन के लिए जारी प्रयास का तिरस्कार करते हुए मौजूदा व्यवस्था को सुधारने के बुर्जुआ वर्ग की दगाबाजीपूर्ण धोखे एवं पेटि बुर्जुआई सुधारवादी कुतर्कों का हमें मजबूती से विरोध करना चाहिए.

ऊपर उल्लेखित विषय से उत्पन्न होने वाला प्रधान उसूल यह है कि जाति के सवाल को मात्र बुनियाद या ऊपरी ढांचे का हिस्सा मानकर, उसका हल नहीं कर सकते हैं. नव जनवादी क्रांति के आरंभ से लेकर उसकी अंतिम जीत तक बुनियाद एवं ऊपरी ढांचे में जाति पर चौतरफा हमला करने से ही उसे रद्द करने का रास्ता सुगम बनेगा.

अध्याय–6

जाति के सवाल पर हमारी पार्टी की समझदारी – आचरण

हमारी पार्टी जाति के सवाल को भारतीय समाज से संबंधित एक विशेष समस्या के रूप में ही देख रही है. हमारी पार्टी यह कह रही है कि हमारे देश की जनता आज जिस तरह विभिन्न वर्गों के तहत विभाजित है, उसी तरह विभिन्न जातियों के तहत भी विभाजित है. इसलिए इस समस्या के प्रति

साधारणतया एवं ठोस रूप से भी हमें स्पष्ट रुख रखना होगा. 2007 में संपन्न हमारी नई पार्टी की एकता कांग्रेस–9वीं कांग्रेस में अनुमोदित बुनियादी दस्तावेजों (पार्टी कार्यक्रम एवं भारतीय क्रांति की रणनीति एवं कार्यनीति) में स्पष्ट रूप से निम्नांकित तरीके से यह उल्लेखित किया गया है कि नव जनवादी क्रांति के लक्ष्य के साथ इस विशेष समस्या पर दलित एवं अन्य दमित जातियों की जनता सहित अन्य जातियों की जनवादी शक्तियों को गोलबंद करते हुए मजबूत आंदोलन का निर्माण करने पर जोर देना चाहिए.

''हजारों सालों से भारतीय समाज पर हावी रहा सामन्तवाद जड़ किस्म का जाति–आधारित सामन्तवाद रहा है, जो ब्राह्मणवादी विचारधारा पर निर्मित हुआ था. उत्पाड़ितों से, विशेष कर तथाकथित बहिष्कृत जातियों से, जिन्हें गुलामों जैसी दशा में धकेल दिया गया था, भारी मात्रा में अधिशेष को निचोड़ने के लिए इस भयानक जाति प्रथा का यहां अत्यधिक महत्व रहा है.'' (पार्टी कार्यक्रम, पृष्ठ–3)

''भारत में सामन्तवाद/अर्द्ध–सामन्तवाद का रूप परम्परागत यूरोपीय रूप जैसा ही नहीं है. यहां जातिगत उत्पीड़न और ब्राह्मणवाद मौजूदा अर्द्ध–सामन्ती, अर्द्ध–औपनिवेशिक व्यवस्था के साथ अविच्छिन्न रूप से गुंथा हुआ है. जाति व्यवस्था केवल अधिरचनात्मक परिघटना ही नहीं है, बल्कि आर्थिक आधार का भी हिस्सा है. इस वजह से छुआछूत के उन्मूलन के साथ ही साथ जाति व्यवस्था का नाश और ब्राह्मणवाद की सभी अभिव्यक्तियों के खिलाफ संघर्ष हमारे देश में नयी जनवादी क्रान्ति का आवश्यक अंग है. जातिवाद और ब्राह्मणवाद सारतः अभिजातीय एवं अधिकारतान्त्रिक हैं और जन्म से ही अपने से उत्पीड़ित अन्य जातियों पर लोगों में श्रेष्ठता का बोध पैदा करते हैं. इन सारी चीजों को धर्म के नाम पर दैवी अनुमोदन मिल जाता है. यह उत्पीड़ित अवाम को विभाजित करने का एक खतरनाक हथियार भी है. किसी भी शोषणकारी व्यवस्था के लिए ऐसा अभिजातीय ढांचा सर्वोत्तम बन जाता है.'' (भारतीय क्रांति की रणनीति–कार्यनीति, पृष्ठ 16–17)

''जाति–आधारित ब्राह्मणवादी सामंतवाद भारतीय जनता की विशाल बहुसंख्या को पिछड़े उत्पादन–संबंधों में जकड़े रखकर उत्पादक शक्तियों के विकास को अवरुद्ध करता है. आर्थिक रूप से यह जनता की भारी बहुसंख्या

मुताबिक देश की जेलों में बंद कैदियों में से 53 प्रतिशत दलित, आदिवासी एवं मुसलमान ही हैं. एक तरफ पीड़क जातियों के लोग एवं हिन्दु धर्मोन्मादियों द्वारा हर साल दलितों, आदिवासियों, मुसलमानों एवं क्रांतिकारियों पर किए जा रहे अपराधों में गिरफ्तार लोगों की संख्या बहुत कम हैं. ये करीब–करीब बिना सजा के निर्दोष छोड़ दिए जाते हैं. जबकि दूसरी ओर पीड़क जातियों के लोगों एवं हिन्दू धर्मोन्मादियों द्वारा दलितों, आदिवासियों, मुसलमानों एवं क्रांतिकारियों के खिलाफ किए गए हजारों अपराधों में उन्हें करीब–करीब कोई सजा दिए बगैर निर्दोष घोषित करके छोड़ दिया जाता है देश में भारी सनसनी पैदा करने वाले किलवेनमणि, बथानीटोला, लक्ष्मणपुर बाथे, शंकरबिगहा, कारमचेडू, चुण्डूरु, कम्बालापल्ली जैसे नरसंहारों में पीड़क जातियों व पीड़क वर्गों के सभी दोषियों को निर्दोष करार देते हुए न्यायालयों ने बेशर्मी से फैसले सुनाएं. ये सब पुलिस एवं न्याय व्यवस्था के पीड़क जातीय व पीड़क वर्गीय का स्पष्ट रूप से पर्दाफाश कर रहे हैं. दूसरी तरफ दलित, आदिवासी, मुस्लिमों और क्रांतिकारियों को अधिकांश अल्प अपराधों में बड़े पैमाने पर जेल में डालना और सजाए देना कर रहे हैं. इसका जीता–जागता उदाहरण है भीमाकोरेगांव.

दलित एवं आदिवासियों पर इस तरह के हजारों, लाखों अत्याचार जो सरकारी आंकड़ों में चढ़ते नहीं हैं, जारी हैं. उसी तरह इनमें हत्याओं की संख्या काफी ज्यादा ही है. आज की परिस्थितियों में, जहां दलितों के साथ गाली गलौज या मारपीट के मामलों में वे चूंकि पहले जैसे दबकर नहीं रहते हैं, अतः उनकी हत्या को एक पद्धति के रूप में पीड़क जातीय दुरहंकारी अमल कर रहे हैं. निरंतर चेतनत हो रहे दलितों का दमन करने के लिए पीड़क जातियों के सामंती व दुष्ट मुखिया ताकतें उन पर सामूहिक अत्याचार कर रहे हैं, उनके घरों को ध्वस्त कर रहे हैं एवं दसियों की संख्या में क्रूरतापूर्वक उनकी हत्या कर रहे हैं. विशेषकर, हाल ही के वर्षों में खैरलांजी, उन्नाव, खतुवा, हाथरस, बाराबंकी जैसे घटनाओं में धर्मोन्मादियों द्वारा दलित, आदिवासी और किशोरी बालिकाओं पर हिंदुत्व हमला कर, अत्याचार कर, हत्या करना देश में एक रुझान के रूप में ही जारी है. ऐसी सिलसिलेवार घटनाएं मोदी का 'बेटी बचाव, बेटी पढ़ाव' नारे का धज्जियां उड़ा रही हैं. इज्जत की हत्याओं के नाम पर दलित युवकों को अमानवीय रूप से हत्या की जा रही हैं. तेलंगाना

अब तक हमने क्रांतिकारी वर्गों को नव जनवादी क्रांति में गोलबंद करने के लिए प्रधानतया वर्ग संगठनों के द्वारा प्रयास करते हुए, उनके द्वारा जातिगत भेदभाव के खिलाफ संघर्षों को संचालित किया. हमारे अनुभव से हमें यह जाहिर हुआ कि सिर्फ वर्गीय संगठनों के जरिए ही सामाजिक असमानताओं को मिटाना संभव नहीं है. जातिगत दमन के खिलाफ होने वाला संघर्ष शासक वर्गों के खिलाफ होने वाला संघर्ष ही नहीं बल्कि जनता के बीच किए जाने वाला सामाजिक व सांस्कृतिक संघर्ष भी है. जाति आधारित भारतीय समाज में पीड़क उत्पीड़ित (पिछड़ी एवं दलित) जातियों की जनता सैकड़ों व हजारों जातियों व उपजातियों में बंटी हुई है. पीड़क उत्पीड़ित (पिछड़ी एवं दलित) जातियों व उप जातियों की जनता के बीच ऊपर से नीचे तक सीढ़ीदार जाति व्यवस्था से संबंधित विभिन्न रूपों की सामाजिक असमानता, अंतर, दमन एवं अंतरविरोध जारी हैं. उदाहरण के लिए बाकी जातियों के ही जैसे दलितों में भी विभिन्न जातियों व उपजातियों के बीच एक तरह की अस्पृश्यता के साथ–साथ अंतर व अंतर विरोध जारी हैं. उनके बीच शादियां प्रतिबंधित हैं. उनके घर, मंदिर एवं गिरिजाघर अलग–अलग हैं. उसी तरह पिछड़े लोगों में भी यही स्थिति है. ऐसी परिस्थितियों में जनता के बीच विशेषकर उत्पीड़ितों के बीच जातिगत भेदभाव को दूर करके समानता हासिल करने एवं किसी भी तरह की अस्पृश्यता के लिए कोई जगह न देने के अनुरूप जाति उन्मूलन के लक्ष्य से संघर्ष को जारी रखना होगा.

दिन–ब–दिन दलितों पर पीड़क जातीय अहंकारियों एवं भूस्वामियों के हमलें बढ़ रहे हैं. इन हमलों और अपराधों के खिलाफ हर साल हजारों मामलें पुलिस थानों में दर्ज होने के बावजूद, इनमें से बहुत कम मामलों में ही सजा मिल रही है. हमें इस विषय को गहराई से जांच करने से एस.सी., एस.टी.यों पर हो रहे हजारों अपराध दर्ज नहीं हो रहा हैं, यह स्पष्ट है. या सुनने में आता है कि पुलिस इन्हें दर्ज करने से इंकार करते हैं. दूसरी तरफ दर्ज किए गए हजारों मामलें कोर्टों में विचाराधीन है. और कुछ मामलें पुलिस के घोर लापरवाही और सरकारी वकीलों के पूर्णतया प्रतिकूल रवैया के कारण बरी कर दिया गया.

नेशनल क्राईम रिकॉड्स ब्यूरो सर्वे, प्रिजन स्टैटिस्टिक्स इंडिया 2013 के

को भीषण गरीब व बदहाल बनाए रखता है और उनकी क्रय–क्षमता को घटाता है. इस तरह यह घरेलू बाजार के विकास को रोकता है, औद्योगिक विकास को बाधित करता है और भारी पैमाने पर बेरोजगारी की ओर तथा अर्थव्यवस्था के ठहराव की ओर ले जाता है. राजनीतिक रूप से यह जनता के जनवादी अधिकारों का दमन करता है और कुछेक जगहों में राज्य के भीतर राज्य का अर्थात्, ग्रामीण क्षेत्रों में अपनी निजी सेनाओं या राज्य की किराये की सशस्त्र सेना के समर्थन से एक समानान्तर जमींदारी राज्य का निर्माण करता है. यह किसानों की दासता और गुलामी को चिरस्थायी बनाता है. सामाजिक और विचारधारात्मक रूप से ब्राह्मणवाद और जाति प्रथा निम्न जातियों तथा दलितों के उत्पीड़न को बढ़ा देती हैं. दलितों के लिए यह छुआछूत का अमानवीय रूप ले लेता है. सामन्ती हितों द्वारा अधिशेष के दोहन के लिए ये आर्थिकेतर रूपों के तौर पर साधन बन जाती हैं.'' (भारतीय क्रांति की रणनीति–कार्यनीति, पृष्ठ 16–17)

''निन्दनीय जाति व्यवस्था और जातिवाद, खास कर ब्राह्मणवादी जातिवाद भारतीय समाज की अर्ध–सामन्ती व्यवस्था की एक खास विशेषता है. घृणास्पद जाति व्यवस्था और जातिवाद, जिसे शासक वर्गों ने हजारों वर्षों तक जारी रखा है, सामाजिक उत्पीड़न और शोषण का एक विशिष्ट रूप है, जो देश की उत्पीड़ित जातियों को अपना शिकार बना रहा है. जातिवाद व्यक्ति के आत्म–सम्मान को कुचल देता है, उसके साथ नीच जैसा व्यवहार करता है और एक ऐसा सीढ़ीनुमा सामाजिक उच्चश्रेणीक्रम खड़ा कर देता है जिसमें ऊपरी पायदान पर स्थित हर तबका अपने नीचे वालों को नीचा समझता है. यह एक ऐसा हथियार है जिसे भारतीय शासक वर्ग और साम्राज्यवादी दोनों ही गरीबों और उत्पीड़ितों को भड़काने और बांटने के लिए इस्तेमाल करते हैं. उत्पीड़ितों और गरीबों की बहुसंख्या वर्ग–उत्पीड़न के अलावा घोर जातिगत उत्पीड़न का भी शिकार है. साम्राज्यवाद, सामन्तवाद और दलाल नौकरशाह पूंजीवाद के खिलाफ संचालित उनके वास्तविक संघर्षों को तोड़ने के लिए जातिवाद का इस्तेमाल किया जाता है.''

''दलित इस जातिवादी सीढ़ी के सबसे निचले पायदान पर हैं जहां वे अपने ऊपर की सभी सामाजिक श्रेणियों की ओर से, खास कर सामन्ती

शक्तियों की ओर से घोर सामाजिक उत्पीड़न का सामना करते हैं. छुआछूत की अमानवीय प्रथा अभी भी जारी है और इसे टिकाये रखा जा रहा है. दलितों के साथ दूसरे दर्जे के नागरिकों जैसा व्यवहार होता है. आज भी उनमें से 90 से 95 प्रतिशत या तो भूमिहीन व गरीब किसान हैं या खेतिहर मजदूर.''

''आज भी सामन्ती उत्पीड़न के खिलाफ और समाज में अपने बराबरी का दर्जा पाने के लिए सदियों पुराने उनके संघर्षों को निशाना बनाया जा रहा है और दलितों को शासक वर्ग और उनके राज्यतन्त्र द्वारा संरक्षण–प्राप्त सामन्ती तथा हिन्दुत्व की कट्टरतावादी शक्तियों के बर्बर आक्रमणों का शिकार होना पड़ रहा है. इसकी अभिव्यक्ति नरसंहारों तथा सामूहिक बलात्कारों में हो रही है.'' (पार्टी कार्यक्रम, पृष्ठ–18)

''हालांकि दलितों का सवाल अपनी अन्तर्वस्तु में एक वर्गीय सवाल है, फिर भी पार्टी के चाहिए कि वह नव–जनवादी क्रान्ति के एक हिस्से के बतौर दलितों व अन्य पिछड़ी जातियों पर जातिगत उत्पीड़न के खिलाफ संघर्षों का नेतृत्व करे और जाति व्यवस्था के उन्मूलन की ओर बढ़ते हुए जातिगत भेदभाव तथा जातिगत उत्पीड़न के सभी रूपों से लड़ने के दौरान सामाजिक जीवन के सभी क्षेत्रों में उनके लिए बराबरी के दर्जा हासिल करने के लिए संघर्ष करे.'' (पार्टी कार्यक्रम, पृष्ठ–19)

''किसानों की विशाल बहुसंख्या को दुर्दशाग्रस्त व फटेहाल जीवन की अर्ध सामंती परिस्थितियों को, जो अपने ब्राह्मणवादी और जातीय–आधारित चरित्र के नाते बुरी से बुरी होती हैं, बदलने के लिए कृषि क्रांति की फौरी जरूरत है. यह परिस्थिति इस तथ्य से सामने आती है कि भारत की जनवादी क्रांति अभी भी अधूरी है और भूमि का सवाल हल नहीं हुआ है, जबकि अभिजातीय और अधिकारतान्त्रिक जाति प्रथा अभी अपने सम्पूर्ण गैर–जनवादी ढाँचों के साथ बरकरार है. अतः नव जनवादी क्रांति की अन्तरवस्तु, भूमि और राजनीतिक सत्ता के लिए किसान युद्ध है. यह एक ऐसा पहलू है जिसे पार्टी, जनसेना में व्यापक किसान–जनता को जागृत और संगठित करने के लिए कारगर रूप से इस्तेमाल कर सकती है.'' (भारतीय क्रांति की रणनीति–कार्यनीति, पृष्ठ 46)

चेतना बढ़ायी गयी कि वे भी सभी के बराबर हैं. इस तरह ग्रामीण इलाकों में जारी अस्पृश्यता एवं जातिगत भेदभाव को संघर्ष के क्रम में उल्लेखनीय हद तक कम करके उत्पीड़ित जातियों एवं विभिन्न जातियों के उत्पीड़ित वर्गों को हमने क्रांतिकारी आंदोलन में एकताबद्ध करने की कोशिश की. इसी तरह शहरी जनता के बीच में भी प्रयास किया.

फिर भी हमारा अनुभव यह बता रहा है कि समस्या के स्वरूप को देखते हुए हमारे उपरोक्त प्रयास पर्याप्त नहीं हैं. यह भी एक सच्चाई है कि समस्या की गहराई को जिस तरीके से उपरोक्त अध्यायों में बताया गया है उतने गहरे, अविराम व दृढ़ प्रयास हम जारी नहीं रख सके. साधारणतया जाति समस्या पर सही समझदारी रखने के बावजूद ठोस व गहराई से देखने पर यह जाहिर होता है कि हमारी समझदारी व आचरण में कुछ सीमितताएं व खामियां मौजूद हैं. इन्हीं की वजह से जाति उन्मूलन के सवाल के प्रति समग्र व ठोस कार्यक्रम अपनाने में, संघर्ष व संगठन के नए रूप अपनाने में एवं अपनाए गए दावपेंचों को निरंतरता के साथ जारी रखने में कमियां रह गईं.

सामंती विरोधी एवं साम्राज्यवादी विरोधी वर्ग संघर्षों के साथ–साथ उसी समय में उनके साथ जोड़कर, विभिन्न सामाजिक समस्याओं पर विशेषकर, ब्राह्मणीय विचारधारा, अस्पृश्यता, जातिगत उत्पीड़न के विरोध में सामाजिक क्षेत्र में वर्ग संघर्ष संचालित करने के जरिए ही दलित एवं अन्यान्य उत्पीड़ित जातियों की जनता में यह चेतना बढ़ेगी कि सामाजिक तौर पर वे भी सभी के जैसे इन्सान हैं एवं सभी के बराबर जीने की योग्यता उन्हें भी है. उनमें बढ़ते व्यक्तित्व का वह संकेत है. उस तरह के व्यक्तित्व के विकसित हुए बगैर क्रांतिकारी चेतना का बढ़ना भी असंभव है. इसलिए नव जनवादी क्रांति के लक्ष्य से सामंतवाद व साम्राज्यवाद विरोधी आर्थिक एवं राजनीतिक संघर्षों के साथ–साथ सामाजिक व सांस्कृतिक समस्याओं पर संघर्षों को संचालित करने पर भी ध्यान केन्द्रित करने के जरिए हम दलित एवं अन्य उत्पीड़ित जातियों की जनता के व्यक्तित्व का क्रांतिकारीकरण कर सकते हैं. उस व्यक्तित्व के फलस्वरूप ही उत्पीड़ित वर्गों जो कि क्रांति की रीढ़ हैं, की दलित एवं अन्य उत्पीड़ित जातियों की जनता क्रांतिकारी चेतना को जल्द विकसित कर सकती है.

दूसरी ओर एससी, ओबीसी व एसटी आरक्षण का समर्थन करते हुए, उन्हें हासिल करने के लिए संघर्षों को संचालित करने में हम अग्रिम पंक्ति में थे. जातिवाद को उकसाने वाले ब्राह्मणीय हिन्दू पीड़क जातीय दुरहंकार एवं उसका सरगना संघ परिवार व भाजपा के खिलाफ प्रचार आंदोलन की गतिविधियों को अपनाया. उसी के तहत जनता को गोलबंद करके कई सभाओं व सम्मेलनों का आयोजन किया.

हमारे क्रांतिकारी आंदोलन द्वारा हासिल एक महान जीत यह है कि भारतीय समाज के व्यापक ग्रामीण इलाकों में सशस्त्र कृषि क्रांतिकारी आंदोलन द्वारा दलित एवं अन्यान्य दमित जातियों की गरीब जनता के साथ–साथ पीड़क जातियों की गरीब व मध्य वर्गीय जनता को राजनीतिक रूप से गोलबंद व संगठित करते हुए, लंबे समय तक सामंतवाद एवं पीड़क जातीय दुरहंकार का सामना करके उस पर एक के बाद एक धक्का देकर उसकी बुनियाद एवं उस पर आधारित ब्राह्मणीय पीड़क जातीय मूल्यों को झकझोरते हुए, इस समस्या के स्थाई हल के लिए एक नए दृष्टिकोण एवं संघर्ष की नई राह को सामने लाना. उसी तरह एक और महान विजय यह है कि दलित व पिछड़ी जातियों एवं आदिवासियों से संबंधित उत्पीड़ित जनता का वर्ग संघर्ष में सुशिक्षित होते हुए विभिन्न जन संगठनों, क्रांतिकारी जन कमेटियों, पार्टी, जन मुक्ति छापामार सेना के निर्माणों में न सिर्फ ग्राम स्तर पर बल्कि राज्य एवं केन्द्रीय स्तर पर नेतृत्वकारी स्थानों में पहुंचना.

दमन का शिकार होने वाले दलित एवं अन्य जातियों की जनता को राजनीतिक रूप से गोलबंद करते हुए संगठित करने के क्रम में पीड़क जातियों के सामंती दुष्ट मुखिया ताकतों के दुरहंकार एवं सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक आधिपत्य को ध्वस्त करने के लिए जारी कई संघर्षों के जरिए उनके भीतर आत्मविश्वास बढ़ाया था. हमारी पार्टी के कार्यक्षेत्र के विभिन्न इलाकों में, वहां के आंदोलन की ताकत के मुताबिक जाति के नाम पर की जाने वाली गाली गलौज को, दलित जनता को नीचा दिखाते हुए हल्की नजर से पुकारने वाले संबोधनों को करीब–करीब पूरी तरह या काफी हद तक या उल्लेखनीय स्तर तक रोका गया. इनमें लंबे समय से मौजूद आत्मन्यूनता की भावना को काफी हद तक दूर किया गया. इस तरह इनमें यह सामाजिक

''भारत में समाज गहराई तक जाति से ग्रस्त है. यहां जातिगत उत्पीड़न और ब्राह्मणवादी श्रेष्ठता का व्यापक प्रचलन है. इस सामाजिक सीढ़ी के सबसे निचले पायदान में दलित हैं जिन्हें छुआछूत की अमानवीय प्रथा का सामना करना पड़ता है. जातिगत उत्पीड़न के सभी रूपों का विरोध करना होगा. मगर पार्टी को खास तौर पर दलितों के उत्पीड़न और छुआछूत के उन्मूलन पर ध्यान केन्द्रित करना होगा. दलितों या अनुसूचित जातियों को एक विशेष सामाजिक तबके के रूप में लिया जाना चाहिए जो घिनौने घोर जातिवादी भारतीय समाज की एक विशिष्टता है. हालांकि उनकी विशाल बहुसंख्या (90 प्रतिशत से भी ज्यादा) गरीब व भूमिहीन किसानों और सर्वहारा वर्ग तथा अन्यान्य मजदूरी करने वाले तबकों की है, पर वे सामाजिक उत्पीड़न, पीड़क जातियों के अत्याचारों और जीवन के सभी क्षेत्रों में भेदभाव के शिकार हैं. इस सामाजिक उत्पीड़न की सर्वाधिक जघन्य और अमानवीय अभिव्यक्ति छूआछूत प्रथा में दिखाई पड़ती है जो भारत के अधिकांश हिस्सों में अभी भी जारी है. जोतनेवालों को जमीन बांट देने के नारे के आधार पर कृषि क्रांति को सफलतापूर्वक सम्पन्न करने के जरिए इस मौजूदा अर्ध सामंती–अर्ध औपनिवेशिक ढ़ांचे को चकनाचूर करने में ही दलितों की समस्या का वास्तविक हल निहित है.''

''दलितों के विशाल जनसमुदाय को, जो भारतीय जनसंख्या के करीब 17.5 प्रतिशत हैं, कृषि क्रांति में गोलबंद करने के साथ ही साथ हमें अवश्य ही उनके खिलाफ पीड़क जातियों द्वारा किये जा रहे सामाजिक उत्पीड़न और जातिगत भेदभाव के सभी रूपों से लड़ने के कार्य पर भी विशेष बल देना चाहिए. छूआछूत की बुराइयों, दलितों पर पीड़क जातियों के अत्याचारों और जाति–आधारित भेदभाव के अन्यान्य रूपों से लड़ने के लिए विभिन्न स्तरों पर यथोपयुक्त सांगठनिक रूपों को सामने लाया जाना चाहिए. साथ ही हमें निश्चित रूप से दलितों के लिए सिर्फ जाति–आधारित संगठनों का निर्माण करने से बाज आना चाहिए जो उन्हें सिर्फ और भी अलगाव की ओर ही ले जाएंगे.''

''पार्टी को अवश्य ही दलितों और अन्यान्य पिछड़ी जातियों के समान अधिकारों, आरक्षण तथा अन्यान्य विशेष सुविधओं के लिए संघर्ष करना होगा. इन्हें जनवाद के लिए संघर्ष का अभिन्न अंग माना जाना चाहिए. इसके साथ ही

साथ हमें निश्चित रूप से इन मुद्दों पर शासक वर्ग की पार्टियों और राज्य की नीतियों के खोखलेपन का भी भंड़ाफोड़ करना होगा. हमें अवश्य ही उन अवसरवादी दलित नेताओं का भी भंडाफोड़ करना होगा जो दलित मुद्दों को उठाने के नाम पर अपना चुनावी भविष्य संवारते हैं. हमें अपने वर्गीय संगठनों की ओर से दलितों पर हिंसा और भेदभाव के सभी रूपों के खिलाफ संघर्षों की पहल करनी होगी और नेतृत्व करना होगा. समाज के नये जनवादी रूपान्तर के हिस्से के तौर पर छुआछूत तथा जातिगत भेदभाव से लड़ने और जाति प्रथा के उन्मूलन के लिए संगठनों का निर्माण करना भी एक नितान्त फौरी आवश्यकता है.''

''कुछेक राज्यों में दलितों के निम्न पूंजीवादी तबके ने सिर्फ दलितों के संगठनों का निर्माण किया है और वे उनकी समस्याओं से जुड़े कुछेक मुद्दों पर आंदोलन खड़े कर रहे हैं. हमें इन मुद्दों पर इन निम्न पूंजीवादी संगठनों के साथ संयुक्त रूप से काम करना चाहिए और साथ ही जाति के उन्मूलन के लिए उनके सुधारवादी समाधानों, मसलन धर्मान्तर और आरक्षण के प्रति उनकी दिशा को लेकर उनके साथ विचारधारात्मक तथा राजनीतिक बहस चलानी चाहिए. हमें जाति प्रथा के सवाल पर क्रान्तिकारी नीति का प्रचार करते हुए इन मुद्दों पर नेतृत्व के सुधारवाद और अवसरवाद को बेनकाब करना चाहिए. आज एक क्रांतिकारी विकल्प के अभाव के चलते ही देश के विभिन्न भागों में केवल दलित संगठनों का भारी संख्या में उद्भव हो रहा है. यदि क्रांतिकारी पार्टी और जनसंगठन दलितों के मुद्दों को उठाएं और जनता के सभी तबकों को शामिल करके एक व्यापक आधार वाले आंदोलन का निर्माण करें, तो ऐसे संगठन अप्रासंगिक हो जाएंगे.'' (भारतीय क्रांति की रणनीति–कार्यनीति, पृष्ठ 157–158)

''देश में छुआछूत से लड़ने वाला मजबूत दलित आन्दोलन मौजूद रहा है. इसके एक हिस्से को शासक वर्गों द्वारा को–ऑप्ट किये जाने के बावजूद दलितों पर हमलों के खिलाफ और उनके अपमान के खिलाफ स्वतःस्फूर्त संघर्ष उठ खड़े होते रहते हैं. यह केवल देहाती क्षेत्रों में ही नहीं, बल्कि शहरी क्षेत्रों में भी हो रहा है जहां दलितों का सिर उठाना बढ़ा है. इन आन्दोलनों में हिस्सेदारी करना और जहां सम्भव हो वहां नेतृत्व करना महत्वपूर्ण है. ऐसा करते हुए हमें जातिगत उत्पीड़न तथा छुआछूत को समाज के सम्पूर्ण

चेतनापूर्वक प्रयास किया. इसी तरह शहरों के जन संगठनों में भी नेतृत्व को विकसित किया. पार्टी के नेतृत्व में गांवों के मामले में नेतृत्व के तौर पर ये जो राजनीतिक भूमिका निभा रहे हैं, उसका पिछड़ी और पीड़क जातियों के लोगों को भी अनुमोदन कररहे है. इस तरह सभी जातियों की गरीब व मध्यम वर्गीय जनता के बीच एकता बढ़ते हुए क्रमशः जाति उन्मूलन के लिए जारी जनवादी संघर्ष के रूप में विकसित हो रहा है.

देश के कई राज्यों के ग्रामीण इलाकों में दलितों पर सामंती, तानाशाही ताकतों द्वारा अमल किए गए शोषण, उत्पीड़न एवं आधिपत्य के खिलाफ, अस्पृश्यता, दलितों पर सामाजिक दमन एवं भौतिक हमलों के खिलाफ हमने कई संघर्षों को अपनाया. सामंती, तानाशाही पीड़क जातीय दुरहंकारी ताकतों द्वारा जब बिहार व आन्ध्रप्रदेश राज्यों में दलितों का नरसंहार किया गया था, तब हमने उत्पीड़ितों के पक्ष में काफी दृढ़ता के साथ डटे रहने के साथ–साथ इन जुल्मों का पर्दाफाश करते हुए बड़े पैमाने पर प्रचार व विरोध कार्यक्रमों का आयोजन किया था. लक्ष्मणपुर बाथे, चिनारी, दलाल चौक–बघौरा एवं कारमचेडू जैसे इलाकों में हमने इस तरह की प्रतिक्रांतिकारी ताकतों का उन्मूलन किया था. बिहार में 1970 के दशक की आखिरी से लेकर विगत दशक के पूर्व तक सामंती दुष्ट मुखिया पीड़क जातीय दुरहंकारी ताकतों द्वारा प्रधान शोषक वर्गीय राजनीतिक पार्टियों के नेताओं की मदद एवं राज्य व प्रशासनिक तंत्र के समर्थन से गठित ब्रह्मर्षि सेना, भूमि सेना, सनलाईट सेना, रणवीर सेना, सवर्ण लिबरेशन फ्रंट एवं अन्यान्य सेनाओं ने क्रांतिकारी आंदोलन को खतम करने के लक्ष्य से दलित एवं अन्य उत्पीड़ित वर्गों व उत्पीड़ित जातियों की जनता पर मध्य युगों को याद दिलाने वाले नरसंहारों एवं अंतहीन अत्याचारों को अंजाम दिया था. पार्टी के नेतृत्व में उत्पीड़ित जनता एक–एक करके इन सेनाओं एवं इनका नेतृत्व करने वाले नेताओं का दमन करने से ही क्रांतिकारी आंदोलन आगे बढ़ गया. हालांकि सरकारी सुधार मुख्यतः विभिन्न रूपों में जारी जन संघर्षों का ही नतीजा हैं लेकिन शासक वर्ग अपने स्वार्थ हितों के लिए एवं जनता को भ्रम में डालने के लिए यह प्रचारित करते हैं कि उन्हें वे ही अमल में लाए हैं. इसलिए एक ओर शासक वर्गों के फर्जीवाड़े का भंडाफोड़ करते हुए ही, इन सुधारों की सीमाओं के बारे में जनता को समझाते हुए ही

आवश्यकता बहुत है.

महान नक्सलबाड़ी, श्रीकाकुलम, सोनारपुर, कांक्शा एवं अन्य क्रांतिकारी किसान संघर्षों के समय से भी हमने ग्रामीण इलाकों के बुनियादी वर्गों की जनता को नव जनवादी क्रांति की राजनीति के साथ गोलबंद करके सशस्त्र कृषि क्रांतिकारी आंदोलन का निर्माण करने एवं इन वर्गों के बीच ही कम्युनिस्ट पार्टी के निर्माण को मजबूत करने पर ध्यान केन्द्रित किया था. इसीलिए चेतनापूर्वक एवं योजनाबद्ध ढंग से हमने मुख्यतया गरीब वर्गों के दलित एवं पिछड़ी जातियों की जनता के बीच केन्द्रित करके हमारी गतिविधियों को संचालित किया था. इस तरह काम करने के चलते ही यानी मुख्य रूप से इन जातियों की गरीब, मध्यम वर्गीय किसान जनता को गोलबंद करके हमने मजबूत कृषि क्रांतिकारी आंदोलनों का निर्माण किया था. 'गांव चलो' के राजनीतिक अभियानों के दौरान पार्टी द्वारा छात्र, युवाओं को दिए गए मार्गदर्शन में हमने यह कहा था कि इन अभियानों की सफलता की कसौटी यही रहेगी कि दलित बस्तियों में वे कितने दिन रहे. छात्र, युवाओं ने इस मार्गदर्शन को ठीक से व्यवहार में लाकर अच्छे नतीजे हासिल किए. बंधुआ मजदूरी को रद्द करने, खेत मजदूरों व नौकरों की मजदूरी में बढ़ोत्तरी, भूस्वामियों द्वारा हड़पे गए आर्थिक दण्ड की वापसी, बंजर एवं अन्य सरकारी जमीनों की जब्ती एवं भूस्वामियों की पट्टा जमीनों पर कब्जा जैसे कृषि क्रांतिकारी समस्याओं के अलावा अस्पृश्यता, जातिगत भेदभाव, दलितों पर अत्याचार जैसी सामाजिक समस्याओं पर आंदोलनों का निर्माण करने के द्वारा हमने दलित–पिछड़ी जातियों एवं पीड़क जातियों की गरीब व मध्यम वर्गीय जनता के बीच एकता हासिल की. सामंती विरोधी आंदोलनों के साथ–साथ राजसत्ता विरोधी आंदोलनों, साम्राज्यवाद विरोधी आंदोलनों, शहरों के छात्र, युवा, मजदूर, महिला, मानवाधिकार, साहित्यिक, सांस्कृतिक, कर्मचारी एवं अन्य आंदोलनों द्वारा विभिन्न जातियों विशेषकर दलित व पिछड़ी जातियों की गरीब व मध्यम वर्गीय जनता के बीच एकता हासिल की गई. किसान–मजदूर संगठन/क्रांतिकारी किसान कमेटियों के साथ–साथ युवा, महिला, सांस्कृतिक संगठनों में दलित–पिछड़ी जातियों के गरीब व मध्यम वर्ग से नेतृत्व के स्थानों में पहुंचने व जनता की पहचान हासिल करने लायक विकसित करने के लिए

जनवादीकरण के कार्यभार के साथ, अर्थात् नयी जनवादी क्रान्ति के कार्यभारों के साथ जोड़ते हुए इन आन्दोलनों को सही दिशा देने का प्रयास करना चाहिए.'' (भारतीय क्रांति की रणनीति–कार्यनीति, पृष्ठ 173)

'इस लोक जनवादी क्रान्ति के बाद, शोषकों और शोषितों के बीच वर्ग–विभेद को खत्म करने की प्रक्रिया में उत्पादन–सम्बन्धों का कदम–ब–कदम क्रान्तिकारीकरण होगा. वैज्ञानिक समाजवादी दृष्टिकोण को प्रोत्साहित करते हुए हमारी पार्टी ब्राह्मणवादी विचारधारा, जातिगत उत्पीड़न और भेदभाव के उन्मूलन का प्रयास जारी रखेगी.' (पार्टी कार्यक्रम, 35 वां पाइंट)

''महिलाएं, दलित, आदिवासी और धार्मिक अल्पसंख्यक ऐसे सर्वाधिक महत्वपूर्ण सामाजिक तबके हैं, जिनपर, सर्वहारा वर्ग की पार्टी को भारतवर्ष में मौजूद ठोस परिस्थितियों में क्रांति को नेतृत्व देते वक्त ध्यान देना होगा. इन सभी तबकों की अपनी–अपनी विशेष समस्याएं हैं और ये वर्ग–उत्पीड़न के अलावा विशेष किस्म के गैरआर्थिक उत्पीड़न के शिकार हैं. हमें उनकी विशेष समस्याओं को हल करने और क्रांतिकारी आंदोलन में उन्हें प्रभावी रूप से लामबंद करने हेतु विशेष कार्यभार निर्धारित करने पर पर्याप्त ध्यान देना होगा. इस दिशा में हमें इन तबकों को, अन्यान्य उत्पीड़ित जनता के साथ न सिर्फ वर्ग–संगठनों में लाना होगा, बल्कि इनकी विशेष समस्याओं पर इन्हें सर्वाधिक व्यापक पैमाने पर गोलबंद करने के लिए अल्प और दीर्घ, दोनों मियाद वाले संगठनों एवं संघर्षों के आवश्यक रूपों को सामने लाना होगा. उनके विशेष विक्षोभों एवं शिकायतों के मद्देनजर जब भी और जहां भी आवश्यक हो, ज्यादा व्यापक संयुक्त मोर्चे भी बनाने चाहिए.''

''तथापि इन तबकों से संबंधित विशेष समस्याओं पर विशिष्ट कार्यनीति ग्रहण करते वक्त हमें यह दिमाग में रखना चाहिए कि कार्यनीति को हमेशा हमारी रणनीतिक लाइन के मातहत रहना चाहिए. हमें देश में चल रहे लोकयुद्ध के सामग्रिक परिप्रेक्ष्य में और उससे जोड़ते हुए उनकी विशेष समस्याओं के हल के लिए विशेष कार्यक्रम प्रस्तुत करने चाहिए. हमें अवश्य ही इन तबकों को शिक्षित करना होगा कि कैसे उनकी समस्याएं लाजिमी तौर पर वर्ग समस्याएं हैं और कैसे वर्ग उत्पीड़न से अपने आप को मुक्त करने के जरिए ही उनकी समस्याओं को अंतिम रूप से हल करने का भौतिक आधार

तैयार हो सकता है और इसीलिए सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में अन्यान्य उत्पीड़ित जनता के साथ एकताबद्ध होकर आम दुश्मनों सामंतवाद, साम्राज्यवाद और दलाल नौकरशाह पूंजीवाद के खिलाफ जो देश की व्यापक मेहनतकश जनता का उत्पीड़न कर रहे हैं, युद्ध चलाना एक अनिवार्य आवश्यकता है.''

''हमें अवश्य ही व्यवहार में यह साबित कर देना होगा कि कैसे लोकयुद्ध और जारी वर्ग संघर्ष इन तबकों को और ज्यादा से ज्यादा केन्द्रीय रंगमंच पर लाते जा रहा है और कैसे लोकयुद्ध एवं गहरे होते जा रहे वर्ग संघर्ष की प्रक्रिया में इन उत्पीड़ित तबकों में छुपी हुई संभावनाएं और उनकी सृजनात्मक उर्जा तथा क्रांतिकारी पहलकदमी और उनका सामर्थ्य उजागर हो रहे हैं. इन तबकों के उत्पीड़ितों पर विशेष रूप से ध्यान देने और पार्टी नेतृत्व द्वारा इन्हें विकसित करने के लिए एक ठोस योजना के तहत सचेत रूप से प्रयास करने के जरिए ही केवल हम सामग्रिक रूप से पार्टी में उनके स्तर तथा क्रांतिकारी आंदोलन में उनकी स्थिति में एक गुणात्मक बदलाव ला सकते हैं. अतः अपने सभी छापामार क्षेत्रों और वर्ग संघर्ष के क्षेत्रों में पहले तो हमें गंभीरता के साथ वर्ग–दिशा और जनदिशा का अनुसरण करना होगा. मतलब यह की हमें मुख्यतः भूमिहीन व गरीब किसानों और खेतिहर मजदूरों के बीच, जो सामान्यतः दलित तबकों से आते हैं, काम करना होगा. इस पहलू पर दृढ़तापूर्वक आधारित होते हुए इन तबकों को सभी मोर्चो पर अगली कतार में लाने के लिए हमें विशेष कार्यक्रम लेने होंगे. साथ ही इन तबकों की व्यापक जनता को उनकी विशेष मांगों पर गोलबंद करने के लिए संघर्ष के विशेष रूप निर्धारित करने होंगे. पर यह करना होगा ऐसी एक सुस्पष्ट योजना के साथ ताकि इन तबकों के अगुआ तत्वों को पार्टी और वर्ग संगठनों में शामिल कर लिया जाये.''

''उपरोक्त आम लाइन और रुख को लागू करते हुए हम इन विशेष सामाजिक तबकों की समस्याओं को हल करने के सवाल पर अपने देश में संसदीय और संशोधनवादी पार्टियों, सुधारवादी स्वयंसेवी संगठनों और अन्यान्य निम्न पूंजीवादी संगठनों तथा साथ ही तथाकथित कम्युनिस्ट क्रांतिकारी संगठनों के साथ भी एक सुस्पष्ट विभाजन रेखा खिंचने में समर्थ्य होंगे. हमें अवश्य ही इन तबकों के आंदोलनों में मौजूद विभिन्न पूंजीवादी, सुधरवादी व

संशोधनवादी प्रवृत्तियों का निरंतर राजनीतिक भण्डाफोड़ करना होगा''. (भारतीय क्रांति की रणनीति–कार्यनीति, पृष्ठ 153–154)

जाति के सवाल पर पूर्व की सीपीआई (एमएल) (पीपुल्सवार) एवं एमसीसीआई की समझदारी एवं आचरण बुनियादी तौर पर एक जैसे थे. मूलतः ये सही थे. लेकिन पूर्व की दोनों पार्टियों की समझदारी व कार्याचरण में कुछ सीमितताएं एवं त्रुटियां थी. ग्रामीण इलाकों में दमन का शिकार हो रही दलित एवं अन्य जातियों की जनता को गोलबंद करके कृषि क्रांति के तहत जातिगत एवं अन्य सामाजिक उत्पीड़नों के खिलाफ संघर्षों का निर्माण करके कई उल्लेखनीय जीतें हासिल करने के बावजूद इस समस्या पर विशेष निर्माणों का गठन या पर्याप्त विशेष आंदोलनों का निर्माण नहीं किया गया था. उसी तरह इस समस्या पर सभी क्षेत्रों में आवश्यक सैद्धांतिक, राजनीतिक, सांगठनिक एवं संघर्ष की कोशिश को जारी नहीं रख सके. इससे यह हुआ कि हम सही समय पर विशेष कार्यनीति को विकसित नहीं कर सके थे. साथ ही खेतिहर क्रांति में सक्रिय भूमिका निभाने वाली उत्पीड़ित जनता को जाति के सवाल पर बुर्जुआ व पेटि बुर्जुआ सुधारवाद के प्रभाव का शिकार होने से दीर्घकाल तक मजबूती से बचाए रखने में हम सफल नहीं हुए. नई पार्टी के गठन तक, दोनों पार्टियों के विकासक्रम में, उनके कार्य क्षेत्र के इलाकों की सामाजिक परिस्थितियों में, संबंधित आंदोलनों के सामने उत्पन्न कुछ मुख्य समस्याओं में, एवं उनके नेतृत्व में जारी आंदोलनों के ज्वार भाटा की स्थितियों में मौजूद फर्क के चलते जाति समस्या पर दोनों पार्टियों द्वारा किए गए सैद्धांतिक, राजनीतिक व सांगठनिक कार्य में कुछ अंतर मौजूद हैं. जाति के सवाल पर दोनों पार्टियों की सीमितताओं एवं त्रुटियों ने उस हद तक संबंधित आंदोलनों को नकारात्मक रूप से प्रभावित किया. इस समस्या पर 1990 के दशक के मध्य तक सीपीआई (एम–एल)(पीपुल्सवार) की समझदारी उल्लेखनीय स्तर पर विकसित होकर एक कदम आगे बढ़ी जबकि नई पार्टी के गठन के बाद एकता कांग्रेस–9वीं कांग्रेस के सफलतापूर्वक संपन्न होने के साथ ही इस सवाल पर समूची पार्टी की समझदारी उल्लेखनीय स्तर तक विकसित होकर एक और कदम आगे बढ़ी. फिर भी आज भी इस क्षेत्र में हमारे प्रयास में कई खामियां जारी हैं. इन्हें सुधारते हुए इस क्षेत्र में मजबूत आंदोलन का निर्माण करने की तात्कालिक

उपरोक्त तरीके में राजनीतिक व आर्थिक क्षेत्रों में जाति की बुनियाद के ध्वस्त होने से ऊपरी ढांचे में व्यवस्था के रूप में जाति के अस्तित्व के लिए आवश्यक भौतिक आधार नहीं रह जाता है.

जनता का जनवादी राज्य कृषि उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि हासिल करने की कोशिश करेगा. योजनाबद्ध ढंग से खेती का औद्योगीकरण करेगा. कृषि आधारित उद्योगों के विकास को महत्व देगा. कृषि को बुनियाद बनाकर उद्योगों को नेतृत्वकारी स्थान में रखकर इन दोनों पर निर्भर होकर योजनाबद्ध तरीके से सीढ़ी दर सीढ़ी अर्थ व्यवस्था को विकसित करेगा. देश के असमान विकास के मद्देनजर पिछड़े इलाकों के विकास के लिए विशेष प्रयास करेगा. इससे ग्रामीण व शहरी गरीब जनता के आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक विकास में व सामाजिक संबंधों में महान बदलाव आएगा.

जनता का जनवादी राजसत्ता ग्रामीण इलाकों में ही नहीं, शहरों में भी दलित व अन्य उत्पीड़ित जातियों की जनता को अपने ज्ञान, कुशलताओं को विकसित करने के लिए जरूरी समयावधि को लेकर विशेष प्रशिक्षण व प्रोत्साहन उपलब्ध कराएगा.

ग्रामीण इलाकों में कृषि के औद्योगिकरण के जरिए एवं छोटे व मंझोले उद्योगों को स्थापित करके औद्योगिक उत्पादन को बढ़ाने के जरिए जाति आधारित पेशों की बुनियाद को समाप्त करेगा. जाति आधारित पेशों से बाहर आनेवालों को कृषि एवं उद्योग के क्षेत्रों में रोजगार के अवसर उपलब्ध कराएगा. उन्हें नई पद्धतियां व तकनीक सिखाने के जरिए वैकल्पिक रोजगार उपलब्ध करायेगा. कृषि आधारित उद्योगों को स्थानीय स्तर पर विकसित करेगा. दस्तकार उद्योगों का क्रमशः मशीनीकरण करेगा.

जितना जल्द संभव हो, बेहतर नतीजे हासिल करते हुए इन्हें क्रमबद्ध तरीके से सामूहिकरण की ओर एवं समाजवादी परिवर्तन की ओर आगे बढ़ाने के लिए जनता को गोलबंद करके कृषि में सहकारिता आंदोलनों को संचालित करेगा. इनके साथ–साथ शिक्षा, स्वास्थ्य, पेयजल, परिवहन, दैनिक उपयोगी वस्तुओं की आपूर्ति एवं अन्य क्षेत्रों में गांवों को स्वयंपोषक बनाने के लिए विभिन्न स्तरों पर उन्हें जरूरतमंद मदद उपलब्ध कराते हुए ही, जन सरकारें

आवश्यकता है. ऐसे इलाकों में जहां हम कमजोर हैं और वर्ग संघर्ष प्राथमिक स्तर पर है, में दलितों एवं अन्य उत्पीड़ित जातियों की जनता द्वारा विशेष मांगों को लेकर जारी आंदोलनों में हमें सक्रिय रूप से शरीक होना चाहिए. इन आंदोलनों का नेतृत्व करके, समाज के तमाम पीड़ित तबकों की जनता को शामिल करने के हिसाब से हमें इनका क्रमिक रूप से विस्तार करना चाहिए.

जाति उन्मूलन के संघर्ष को वर्ग संघर्ष के अंतर्भाग के रूप में जारी रखने के लिए सैद्धांतिक रूप से सिर्फ यह चिह्नित करना पर्याप्त नहीं है कि 'जाति की समस्या सारतत्व में आज वर्ग समस्या ही है' बल्कि हमने यह चिह्नित किया कि इस संघर्ष को नव जनवादी क्रांति के हिस्से के तौर पर जारी रखने के लिए उपयुक्त विभिन्न निर्माणों की जरूरत है.

इसी तरह अपने वर्गीय–जातीय आधिपत्य को जारी रखने के लिए पीड़क जातियों के लोगों द्वारा जमाने से निर्मित संस्थाओं का हम विरोध कर रहे हैं.

बड़ी संख्या में गठित होकर विस्तारित होने वाले जातीय संगठन जाति विद्वेष एवं पूर्वाग्रहों को बढ़ाने एवं जनता के विचारों को गुमराह करने में मदद कर रहे हैं. हम जनता से यह कह रहे हैं कि वह इस तरह के जातिगत संगठनों के नेतृत्व के प्रति जागरूक बनी रहे.

दलित एवं उत्पीड़ित जातियों द्वारा अपने अधिकारों की रक्षा के लिए गठित संगठन मौजूद हैं. इनमें से कुछ के जनवादी स्वभाव के होने के बावजूद सही लक्ष्य के अभाव में ये अक्सर शासक वर्गों के प्रभाव में बह रहे हैं. इन्हें सही दिशा देने का हम प्रयास कर रहे हैं.

हम यह चिह्नित कर रहे हैं कि नवजनवादी क्रांति के हिस्से के तौर पर जाति व्यवस्था के उन्मूलन के लक्ष्य के साथ संघर्षरत जाति उन्मूलन संगठनों का निर्माण करके मजबूत आंदोलनों को विकसित करने की आज काफी आवश्यकता है.

इस लक्ष्य को हासिल करने के लिए तमाम उत्पीड़ित जातियों (एससी, बीसी) को एकताबद्ध करने की कोशिश करते हुए ही पीड़क जातियों के ऐसे तबकों व व्यक्तियों के साथ जो जातिगत भेदभाव का पालन नहीं करते हैं और

जातिगत भेदभाव का विरोध करते हैं, मित्रता जारी रखने के साथ ही इनमें मौजूद पुरोगामी ताकतों को जाति उन्मूलन के आंदोलन में सक्रिय रूप से गोलबंद करने हमें गंभीर प्रयास करना चाहिए. इस मामले में हुई गलती को सुधारने का हमने निर्णय लिया है.

जाति व्यवस्था का बचाव करने वाले सामंतवाद व साम्राज्यवाद के खिलाफ संघर्ष करते हुए ही सामंतवाद एवं जाति व्यवस्था के लिए आधारभूत सामंती ताकतों को जाति उन्मूलन आंदोलन के प्रधान दुश्मन के रूप में चुनकर, ब्राह्मणीय हिन्दू धर्मोन्मादी जाति दुरहंकारी ताकतों के खिलाफ संघर्ष को तेज करने की जरूरत है.

सामंतवाद एवं साम्राज्यवाद के खिलाफ संघर्षरत तमाम संस्थाओं एवं व्यक्तियों के साथ जाति उन्मूलन आंदोलन एकता स्थापित करने की कोशिश कर रहा है.

जाति उन्मूलन के विचारों का सभी रूपों में प्रचार करने, जाति के नाम पर जारी सामाजिक उत्पीड़न का प्रतिरोध करने एवं उत्पीड़ित जातियों के सामाजिक व सांस्कृतिक स्तर को बढ़ाने की कोशिश कर रहे हैं.

अस्पृश्यता के उन्मूलन के लिए अंतरजातीय विवाहों, सहपंक्ति भोजनों, साझा कुंओं के निर्माण एवं साझा आवासों के लिए स्थल आबंटन को प्रोत्साहित करने जैसे क्रियाकलापों को सामाजिक आंदोलनों के रूप में विकसित करने की जरूरत है.

उत्पीड़ित जातियों की शिक्षा एवं सांस्कृतिक स्तर को विकसित करने विशेष शिक्षा कार्यक्रमों, रात्रि पाठशालाओं, सांस्कृतिक गतिविधियों के संचालन के साथ–साथ श्रम का आदर करने की भावना को ऊंचा उठाते हुए एवं हिन्दू धर्म से संबंधित कुत्सित जाति व्यवस्था का पर्दाफाश करते हुए सांस्कृतिक प्रदर्शनों के आयोजनों को सामाजिक आंदोलनों के रूप में जारी रखने की आवश्यकता है.

गुरिल्ला जोन इलाकों जहां वर्ग संघर्ष जोरों पर चल रहा है, में भी इस तरह के संगठनों का निर्माण करके, जनता के बीच के जाति भेदों को दूर करने के लिए चेतनापूर्वक प्रयास करना चाहिए. पहले से ही गठित छात्र, युवा

भारतीय समाज एक उन्नत व नई ऐतिहासिक अवस्था में प्रवेश करेगा. इससे उत्पीड़ित जनता एक ऐसी महान ऐतिहासिक अवस्था में प्रवेश करती है जिसमें वह तब तक उसके ऊपर अमल होते आए वर्गीय उत्पीड़न एवं जाति, धर्म, राष्ट्रीयता, लिंग एवं अन्य सामाजिक उत्पीड़नों को मजदूर वर्ग के नेतृत्व में रद्द करने, अपने भविष्य व देश के भविष्य को स्वयं तय करने व अपने हाथों से निर्माण करने की दिशा में अपने पैरों पर खड़े होकर कदम–दर–कदम आगे बढ़ते हुए रास्ते में उत्पन्न होने वाली बाधाओं को एक–एक करके लांघते हुए ऐसे वर्गविहीन समाज जिसमें किसी भी तरह के शोषण व उत्पीड़न के लिए कोई जगह नहीं रहेगी, समाजवाद, साम्यवाद की स्थापना के लक्ष्य के साथ आगे बढ़ती है.

इन तात्कालिक व दीर्घकालिक लक्ष्यों के साथ मजदूर वर्ग के नेतृत्व में जनता की जनवादी राज्य सामाजिक संबंधों, ठोस रूप से जातिगत कोण में व उत्पादन संबंधों में आमूलचूल परिवर्तन लाने के लिए हमारे देश की ठोस सामाजिक परिस्थितियों एवं अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितियों में होनेवाले बदलावों को नजर में रखकर आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, सैनिक एवं पर्यावरणीय आदि अन्यान्य तमाम क्षेत्रों से संबंधित निर्णय लेकर अमल करता है.

2. मजदूर वर्ग के नेतृत्व में जनता का जनवादी राजसत्ता समाज के उत्पादन संबंधों में बुनियादी बदलाव लाएगा. यह राज्य जातिवादी अस्तित्व एवं विभिन्न रूपों में व विभिन्न स्तरों पर जातीय उत्पीड़न के जारी रहने के मौलिक आधार के रूप में मौजूद उत्पादन के प्रधान साधन भूमि, जो भूस्वामियों के हाथों में है, बड़े कृषि एस्टेटों जो विभिन्न निजी संस्थाओं के हाथों में हैं, के साथ–साथ मंदिरों के कब्जे में मौजूद व्यापक जमीनों को जोतने वाले को जमीन के आधार पर बंटवारा करने के द्वारा एवं देश में स्थित साम्राज्यवादियों के उद्योगों, बैंकों, वाणिज्यिक संस्थानों एवं अन्य संपत्तियों को जब्त करके सामाजीकरण करने के द्वारा तथा दलाल नौकरशाही पूंजीपतियों के उद्योगों, व्यापारिक संस्थानों, बैंकों, कृषि फर्मों एवं अन्य संपत्तियों को जब्त करके उनका सामाजिकरण करने के द्वारा बुनियाद में, उत्पादन संबंधों में जाति व्यवस्था को रद्द करेगी, जाति आधारित शोषण को रद्द करेगी.

का भी इस्तेमाल करना चाहिए. हमारे सामाजिक व आंदोलन की असमान परिस्थितियों को नजर में रखकर देखा जाए तो हमें इन कर्तव्यों को हासिल करने के लिए सृजनात्मक ढंग से कोशिश करते हुए ही सिर्फ उन्हीं तक सीमित होकर नहीं सोचना चाहिए. अन्य मामलों के ही जैसे कार्यभारों के मामले में भी हमें अधिभौतिकवादी नजरिए से सोचना नहीं चाहिए. साधारणतया हमारी पार्टी अंतर्राष्ट्रीय व देशीय राजनीतिक व आर्थिक परिस्थितियों में होने वाले बदलावों को नजर में रखकर, आंदोलन में होने वाले बदलावों को नजर में रखकर एवं ठोस परिस्थितियों के ठोस विश्लेषण पर आधारित होकर कार्यभारों को तय करती है जो आंदोलन के विकास में – लक्ष्य को हासिल करने में मददगार हों. व्यापक उत्पीड़ित जन समुदायों को हम जितना ज्यादा, जितने सक्रिय रूप से राजनीतिक क्षेत्र में गोलबंद कर सकते हैं, जितना ज्यादा संगठित कर सकते हैं तो उनके स्वयं के कार्याचरण से उतने ही ज्यादा संगठन व संघर्ष के सृजनात्मक रूप सामने आते हैं. उसके मुताबिक कार्यनीतिक कार्यभारों में भी बदलाव आएगा. नेतृत्व को उन्हें सुधार कर विकसित करना चाहिए. जाति सवाल पर कार्यभार व कार्यनीति तय करने के मामले में हमारी समूची पार्टी इकाईयों व जन संगठनों को सृजनात्मक ढंग से एवं पहलकदमी के साथ हमारी साधारण समझदारी को ध्यान में रखकर काम करना चाहिए.

अध्याय – 8

नव जनवादी क्रांति के बाद के काल में जाति का सवाल

नव जनवादी क्रांति के बाद मजदूर वर्ग के हिरावल दस्ते के रूप में कम्युनिस्ट पार्टी जनता के जनवाद, बाद में समाजवादी जनवाद का नेतृत्व करेगी.

1. मजदूर वर्ग के नेतृत्व में नवजनवादी क्रांति सफल होकर राजनीतिक तौर पर तब तक शासितों के रूप में रहने वाले मजदूर, किसान, शहरी मध्यम वर्ग की जनता, छोटे एवं मंझले पूंजीपति एवं दलित व अन्य उत्पीड़ित तबकों की जनता शासक बनकर जनता की जनवादी व्यवस्था की स्थापना के साथ

किसान, मजदूर, महिला, साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं सभी अन्य जन संगठनों को अपने बुनियादी कार्यक्रम के एक मुख्य मुद्दे के रूप में जाति उन्मूलन से संबंधित विशेष कार्यक्रम को शामिल करना चाहिए. अपने कार्याचरण को याने राजनीतिक गोलबंदी, संगठितीकरण, आंदोलन के निर्माण एवं संयुक्त मोर्चे के क्षेत्र में प्रयास को इस समझदारी के साथ जारी रखना चाहिए. ग्रामीण व शहरी इलाकों के सांस्कृतिक संगठनों को जाति समस्या पर विशेष कार्यक्रम तय करके सांस्कृतिक टोलियों के जरिए प्रचार करना चाहिए. जाति उन्मूलन के लिए हमारी पार्टी द्वारा तय कार्यक्रम को प्रभावशाली ढंग से जारी रखने की आज बहुत ही जरूरत है.

अध्याय–7

विशेष कार्यक्रम

आज के भारत देश में जाति व्यवस्था को बचाए रखने वाले सामंतवाद, दलाल नौकरशाही पूंजीवाद एवं साम्राज्यवाद को उखाड़ फेंककर नव जनवादी क्रांति को सफल बनाने के जरिए जाति व्यवस्था के समूल उन्मूलन के लिए आवश्यक अनुकूल भौतिक परिस्थिति का सृजन करने के लक्ष्य के साथ तमाम क्षेत्रों में जाति विरोधी संघर्ष को जारी रखना चाहिए. इस लक्ष्य को हासिल करने के लिए निम्नांकित रणनीतिक व कार्यनीतिक कार्यभारों को अपनाना चाहिए.

रणनीतिक कार्यभार

1. हमारे देश में मौजूद जाति आधारित सामंती प्रणाली जो कि व्यापक जन समुदायों को पिछड़े हुए उत्पादन संबंधों के साथ बांधकर रखने के द्वारा उत्पादन शक्तियों के विकास के लिए बाधा बना हुआ है; अधिसंख्य जनता के शोषण व उत्पीड़न, दरिद्रता, दयनीय स्थिति एवं अमानवीय अस्पृश्यता व जातिगत उत्पीड़न के लिए कारण बना हुआ है एवं देश की असली आजादी, जनवाद एवं संप्रभुता, आर्थिक, राजनीतिक व सांस्कृतिक प्रगति के रास्ते में बहुत बड़ा बाधा बना हुआ है, के साथ–साथ दलाल नौकरशाही पूंजीवाद एवं साम्राज्यवाद को उखाड़ फेंकने के लिए मजदूर वर्ग के नेतृत्व में चार

क्रांतिकारी वर्गों की जनता, दलित–आदिवासी–धार्मिक अल्पसंख्यक–उत्पीड़ित जातियों की जनता एवं महिलाओं को गोलबंद कर, नव जनवादी क्रांति को सफल बनाने के द्वारा जाति व्यवस्था की बुनियाद को उखाड़ फेंककर स्थाई रूप से जाति व्यवस्था का उन्मूलन करने के लिए आवश्यक भौतिक परिस्थितियों का निर्माण करना.

2. मजदूर वर्गीय पार्टी का मजदूर वर्ग के महान सिद्धांत मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओवाद (एम–एल–एम) के मार्गदर्शन में नव जनवादी क्रांति के काल में ब्राह्मणीय जाति आधारित सामंती विचारधारा, संस्कृति एवं उनके विभिन्न अभिव्यक्तियों को प्रधानतया लक्ष्य बनाकर संघर्ष करते हुए ही साम्राज्यवादी विचारधारा, संस्कृति एवं उनके विभिन्न अभिव्यक्तियों के खिलाफ सतत संघर्ष करना; सांस्कृतिक क्षेत्र में क्रांति को प्रभावशाली ढंग से जारी रखने के तहत आत्मगत शक्तियों एवं जनता के वैश्विक दृष्टिकोण को वैज्ञानिक रूप में तब्दील करने के लिए द्वन्द्वात्मक व ऐतिहासिक भौतिकवादी सिद्धांत, जनवादी विचारों, समाजवादी विचारधारा, नव जनवादी राजनीति एवं नव जनवादी संस्कृति को व्यापक रूप से जनता के सामने लाने के जरिए आत्मगत शक्तियों, व्यापक उत्पीड़ित जन समुदायों को नव जनवादी क्रांति में चेतनापूर्वक एवं बड़े पैमाने पर गोलबंद करना; राजनीतिक क्षेत्र में जारी क्रांति के साथ ही सांस्कृतिक क्षेत्र में क्रांति को जारी रखते हुए पुराने व अप्रासंगिक बनी प्रतिक्रियावादी, प्रतिक्रांतिकारी ताकतों का प्रतिनिधित्व करने वाली ब्राह्मणीय जातिगत आधिपत्य वाली, सामंती एवं साम्राज्यवादी संस्कृतियों को मिटाकर असली जनवादी, समाजवादी संस्कृति जिसमें अस्पृश्यता एवं जातिगत उत्पीड़न के लिए कोई जगह न हो, की स्थापना करना.

3. साम्राज्यवाद, सामंतवाद एवं दलाल नौकरशाही पूंजीवाद द्वारा जारी अत्यंत तीव्र वर्गीय शोषण व उत्पीड़न के साथ–साथ सामाजिक उत्पीड़न का शिकार होने वाले; नव जनवादी क्रांति में शामिल होने वाले; वर्गीय तबकाई संगठनों व संस्थाओं का गठन करने वाले; क्रांति का नेतृत्व करने वाले, मजदूर वर्ग के हाथों में अद्भुत हथियार – पार्टी, जनसेना व संयुक्त मोर्चा के संगठनों में रहने वाले; इस क्रांति को सफल बनाकर नव जनवादी राज्यसत्ता की स्थापना करने वाले; जनता की जनवादी तानाशाही के तहत पहले समाजवादी

10. जाति उन्मूलन संगठनों एवं अन्य जन संगठनों को चाहिए कि वे जाति उन्मूलन के लक्ष्य के साथ अस्पृश्यता, जातिगत भेदभाव के खिलाफ एवं उत्पीड़ित जातियों पर जारी नरसंहारों, अत्याचारों, अपमान, जुल्म एवं दमन के खिलाफ पीड़ितों को कानूनी मदद पहुंचाएं, उनके समर्थन में खड़े होकर नैतिक, आर्थिक व पादार्थिक मदद पहुंचाएं एवं उनके समर्थन में भाईचारा आंदोलनों का निर्माण करें. आचरण के दौरान जातीय उत्पीड़न के खिलाफ संगठन व संघर्ष के सृजनात्मक रूप भी सामने आ रहे हैं. हमारी पार्टी को इनका समर्थन करना चाहिए, इन्हें सांगठनिक सुझाव देते हुए नेतृत्व प्रदान करने की कोशिश करनी चाहिए. इन आंदोलनों को राजनीतिक व सांगठनिक तौर पर संगठित करते हुए जाति उन्मूलन के लक्ष्य को हासिल करने की दिशा में विकसित करने के लिए योजनाबद्ध तरीके से प्रयास करना चाहिए.

11. पीड़क जातीय संगठनों के सामाजिक व सांस्कृतिक आधिपत्यवादी स्वभाव का पर्दाफाश करने के साथ–साथ इनके द्वारा अपनाए जाने वाली दलित एवं अन्य उत्पीड़ित जाति विरोधी गतिविधियों के खिलाफ संघर्ष करना चाहिए. पीड़क जातीय दुरहंकार को उकसाने वाले संगठनों का तीखा विरोध करना चाहिए. इन्हें हमारे हमले का निशाना बनाना चाहिए.

उत्पीड़ित जनता की वर्गीय एकता, उत्पीड़ित सामाजिक तबकों की जनता की एकता में रुकावट बनने वाले उत्पीड़ित जातियों की जातिवादी नेतृत्वकारी ताकतों के खिलाफ संघर्ष करना चाहिए. पीड़क जातीय आधिपत्य के खिलाफ हमारा निशाना साधते हुए ही उत्पीड़ित जातियों में उत्पन्न होने वाले संकीर्णतावादी रुझानों का विरोध करना चाहिए.

हिन्दू धर्मोन्माद के खिलाफ संघर्ष करना चाहिए. हिन्दू एकता के नाम पर पीड़क जातिवादी आधिपत्य एवं जाति व्यवस्था को जारी रखने के प्रयत्नों का विरोध करना चाहिए. जातिगत अत्याचारों और हमलों के खिलाफ प्रतिरोध करने के लिए हमें पहलकदमी लेना चाहिए. अत्याचार करने वालों को सजा दिलाकर उत्पीड़ित जनता को न्याय करने में आगे रहना चाहिए. इसके लिए आत्मरक्षा दस्तों को निर्माण करना चाहिए.

इन विशेष कर्तव्यों के साथ–साथ हमें अब तक अपनाए गए अन्य कर्तव्यों

भी उपलब्ध सुविधाएं हासिल करने की अर्हता रखती हैं. इस मामले में सभी जन आन्दोलनकारी संस्थाओं के कार्यकर्ताओं को व्यवहार में आदर्शवान बने रहना चाहिए. सभी जनांदोलनकारी संस्थाओं के नेतृत्व को चाहिए कि वे अपनी संस्थाओं व जनता के बीच अंतरजातीय व अंतरधर्मीय विवाहों पर अभियान भी संचालित करें.

आरक्षण नीति के सही अमल के लिए संघर्ष करना चाहिए. आरक्षण हटाने के संघ परिवार के एजण्डे के अनुरूप मोदी नीत एनडीए सरकार द्वारा आरक्षण पर पानी फेरने की कोशिशों को परास्त करना चाहिए. उसी तरह सरकार द्वारा अन्य जातियों के गरीब बच्चों को मुफ्त शिक्षा दिलाने के लिए संघर्ष करना चाहिए. सरकारी शिक्षा का कार्पोरेटीकरण करते हुए सार्वजनिक क्षेत्र की संस्थाओं का निजीकरण करते हुए आरक्षण पर पानी फेरने वाली केन्द्र राज्य सरकारों की नीतियों के खिलाफ एससी, बीसी, एसटी जनता के साथ–साथ अन्य जातियों की गरीब जनता विशेषकर छात्र युवाओं, बेरोजगारों, शिक्षकों, मजदूर संगठनों, कर्मचारियों एवं जनवादी शिक्षाविदों को गोलबंद करके संघर्षों का संचालन करना चाहिए. शिक्षा की भगवाकरण के खिलाफ संघर्ष करना चाहिए. पाठ्यांशों से दलित–विरोधी जातिगत विचारधारा को हटाने और स्वाभिमान आंदोलनों को एवं जाति–विरोधी/उन्मूलन आंदोलनों को शामिल करने की मांग को लेकर लड़ना चाहिए.

अनुसूचित जातियों, अन्य पिछड़ी जातियों को ऋण व सब्सिडी देने में होने वाली प्रशासनिक देरी व भ्रष्टाचार के खिलाफ संघर्ष करना चाहिए.

ग्रामीण इलाकों में दलितों द्वारा हासिल अधिकारों से उन्हें वंचित करने, भूस्वामियों की मदद में सरकार द्वारा अमल किए जा रहे दमनकारी कानूनों एवं उत्पीड़न की कार्रवाईयों के खिलाफ संघर्ष करना चाहिए.

9. आत्मसम्मान के लिए जारी दलितों के संघर्षों का समर्थन करना चाहिए, उनमें शामिल होना चाहिए एवं उन्हें नेतृत्व प्रदान करने का प्रयास करना चाहिए. हमारे आंदोलन के इलाकों में इस समस्या पर हमें ही आंदोलन का निर्माण करना चाहिए. इज्जत की हत्याओं के नाम पर अमानवीय तरीके से जारी दलितों की हत्याओं और खाप पंचायतों के विरोध में आंदोलन करना चाहिए.

परिवर्तन को पूरा करके बाद में मजदूर वर्ग की तानाशाही के तहत निरंतर वर्ग संघर्ष के जरिए समाजवाद व साम्यवाद के लक्ष्य से आगे बढ़ने वाले; प्रधानतया देश की आबादी में अधिसंख्य के रूप में मौजूद मजदूर, किसान व शहरी मध्यम वर्ग की जनता विशेषकर मजदूर, खेत मजदूर, गरीब किसान एवं अर्द्ध श्रमिक ही हैं. हमारे ठोस सामाजिक परिस्थितियों में इनमें से अधिकांश दलित एवं अन्य उत्पीड़ित तबकों के ही लोग हैं. ऐसी परिस्थितियों में नवजनवादी क्रांतिकारी संयुक्तमोर्चा में और नयी क्रांतिकारी राजसत्ता में उनके ठोस प्रतिनिधित्व होना चाहिए. लेकिन सामाजिक क्रांति के तमाम क्षेत्रों में उत्पीड़ित वर्गों व उत्पीड़ित तबकों की जनता की चेतनापूर्वक व सक्रिय भूमिका को बढ़ाते हुए मजदूर वर्ग के नेतृत्व को स्थापित करने का रणनीतिक कार्यभार अत्यंत महत्वपूर्ण है. मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओवाद के मार्गदर्शन में हमारे देश की ठोस सामाजिक परिस्थितियों को ध्यान में रखकर, वर्ग दिशा व जन दिशा को सृजनात्मक ढंग से लागू करते हुए हमारी पार्टी को इस कार्यभार की पूर्ति के लिए काम करना होगा.

4. मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओवाद के मार्गदर्शन में कार्यरत हमारी पार्टी की वैज्ञानिक, स्पष्ट व सही समझदारी के मुताबिक भारतीय समाज में जब से वर्ग अस्तित्व में आए हैं तब से लेकर आज तक के हजारों सालों का समूचा इतिहास उत्पीड़क व उत्पीड़ित वर्गों के बीच हुए वर्ग संघर्ष का ही इतिहास रहा है. भारत देश में जबसे वर्णों के रूप में वर्ग बने थे, तब से विभिन्न सामाजिक अवस्थाओं – वर्ण व्यवस्था, सामंती व्यवस्था/जाति व्यवस्था, औपनिवेशिक–सामंती/अर्द्ध सामंती व्यवस्था, अर्द्ध उपनिवेशिक व अर्द्ध सामंती व्यवस्थाओं में हुए वर्ग संघर्ष ही सामाजिक विकास का प्रधान कारण है. इन सभी समाजों में विचारधारात्मक, सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनीतिक, न्याय व अन्य क्षेत्रों में निरंतर वर्ग संघर्ष जारी रहा. उत्पीड़ित लोग कभी भी उत्पीड़कों के खिलाफ संघर्ष किए बगैर नहीं रहे. यह संघर्ष हिंसात्मक या गैर हिंसात्मक, तीव्र स्तर पर या मंद्र स्तर पर चाहे संघर्ष के रूप व तीव्रता जो भी हो, हमेशा संघर्ष चलता रहा. इनमें उत्पीड़ितों को हासिल हार जीत की संख्या व स्तर जो भी हो, यह संघर्ष अनवरत जारी है. उत्पीड़ितों के द्वारा उत्पीड़कों के खिलाफ विभिन्न क्षेत्रों में जारी संघर्षों की विरासत एवं अनुभवों

को हमें ऊंचा उठाए रखना चाहिए. इसके तहत वर्गीय उत्पीड़न एवं सामाजिक उत्पीड़न के खिलाफ हुए आंदोलनों के तमाम सकारात्मक विषयों को ऊंचा उठाना चाहिए. उनकी निरंतरता में एवं विकास के रूप में आज हमारी पार्टी के नेतृत्व में जारी वर्ग संघर्ष/जन युद्ध को आखिरी जीत तक संचालित करके वर्गीय उत्पीड़न व सामाजिक उत्पीड़न से मुक्ति हासिल करनी चाहिए. इसके जरिए देश की आबादी में मौजूद 90 प्रतिशत से ज्यादा के उत्पीड़ित वर्गों व उत्पीड़ित सामाजिक तबकों की जनता की मुक्ति होगी.

कार्यनीतिक कार्यभार

रणनीतिक कार्यभारों को सफल बनाने के लिए निम्नांकित साधारण कार्यनीतिक कार्यभारों को तय किया जाता है. जब इन्हें लागू किया जाता है, तो हमारा देश की असमान वृद्धि और विविधता को ध्यान में रखकर यहां दिए गए कार्यनीतिक कर्तव्यों सहित अन्य संघर्ष एवं सांगठनिक स्वरूपों को सृजनात्मक रूप से लागू किया जाना चाहिए.

1. जाति उन्मूलन के लक्ष्य के साथ हमारी पार्टी के नेतृत्व के विभिन्न वर्गीय संगठन एवं तबकाई संगठन दलित एवं अन्य उत्पीड़ित जातियों, जनवादी वर्गों एवं तबकों की जनता को राजनीतिक तौर पर गोलबंद करके आंदोलनों का निर्माण करते हैं. आज के आंदोलन की विस्तृति एवं प्रभाव के मद्देनजर, इस समस्या पर जारी संघर्षों (सशस्त्र संघर्ष सहित) को उच्च स्तर तक विकसित करने की कोशिश करनी चाहिए. इन संघर्षों को खेतिहर क्रांति के संघर्षों के साथ एवं साम्राज्यवाद विरोधी संघर्षों के साथ समन्वित करके प्रभावशाली ढंग से संचालित करना चाहिए. उसी तरह हमारे वर्गीय संगठनों को चाहिए कि वे इस समस्या पर काम करने वाले विभिन्न विशेष संस्थाओं के साथ एवं संयुक्त मोर्चे के मंचों के साथ समन्वित करके अपनी गतिविधियों को जारी रखे.

इसी समस्या पर दलित एवं अन्य उत्पीड़ित जातियों की जनता एवं जातिगत उत्पीड़न का विरोध करने वाले पीड़क जातियों की जनवादी ताकतों को राजनीतिक रूप से संगठित करते हुए, संघर्ष व संगठन के उपयुक्त व विशेष रूपों को तय करना चाहिए. देश के सामाजिक व क्रांतिकारी आंदोलन

पाबंदी का विरोध करना चाहिए. उत्पीड़ित जातियों द्वारा अपनाए गए पेशों, गाय, बैल, सुअर एवं अन्य जानवरों के मांस खाने की जन परंपराओं को नीच नजरिए से देखने का विरोध करना चाहिए.

सामाजिक आयोजनों में उत्पीड़ित जातियों की समान भागीदारी के लिए संघर्ष करना चाहिए. वर्ग संघर्ष में शामिल होने वाली विभिन्न जातियों की जनता के बीच सामाजिक तौर पर मिल जुलकर रहने के रुझान को बढ़ाने की कोशिश करनी चाहिए. विभिन्न जातियों की जनता के बीच सहपंक्ति भोजनों को प्रोत्साहित करना चाहिए. हमारे जन संगठनों को चाहिए कि वे विभिन्न सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक आयोजनों के मौके पर जन भागीदारी के साथ सहपंक्ति भोजनों का आयोजन करें एवं इन्हें शिक्षा के मुख्य मंचों के तौर पर इस्तेमाल करने का प्रयास करें.

जन संगठनों के कार्यकर्ताओं में मौजूद जातिगत विश्वासों व विचारों का विरोध करना चाहिए, उन्हें दूर करने की शिक्षा देनी चाहिए.

पीड़क जातियों की गरीब जनता में मौजूद इस गलत चेतना एवं भ्रम कि सामाजिक तौर पर वे अपनी जातियों के धनवानों के बराबर हैं, को दूर करना चाहिए.

8. राज्यसत्ता विरोधी संघर्षों में उत्पीड़ित जातियों की जनता को व्यापक पैमाने पर व जुझारू ढंग से गोलबंद करना चाहिए. इन संघर्षों के लिए विभिन्न उत्पीड़ित वर्गों व उत्पीड़ित तबकों की जनता की मदद इकट्ठी करने की कोशिश करनी चाहिए. उसी तरह अन्य उत्पीड़ित वर्गों एवं उत्पीड़ित तबकों की जनता के संघर्षों की मदद में उत्पीड़ित जातियों की जनता को खड़ा करने का प्रयास करना चाहिए.

जातिगत अलगांव पर आधारित आवासीय योजनाओं जो जाति व्यवस्था की स्थिति को यथावत बनाए रखने में मददगार हैं, पर अमल कर रही सरकारों के आधिपत्यजाति अनुकूल उद्देश्यों का पर्दाफाश करना चाहिए.

अंतरजातीय व अंतरधर्मीय विवाहों की मदद करनी करना चाहिए एवं उन्हें प्रोत्साहित करना चाहिए. हमें यह बताना चाहिए कि अंतरजातीय व अंतरधर्मीय विवाह करने वालों की संतानें उनके मां–बाप में से जिस किसी को

जैसे धार्मिक ग्रंथों में व्याप्त जातिवादी विचारधारा का पर्दाफाश करना चाहिए. ऊपरी ढांचे में क्रांति को जारी रखने के तहत ब्राह्मणवाद एवं जातिवाद का वैचारिक रूप से मुकाबला करने पर ध्यान केन्द्रित करके काम करना चाहिए.

शासक वर्गों विशेषकर भाजपा एवं संघ परिवार की ताकतों द्वारा लगातार मास मीड़िया सहित सभी किस्म के प्रचार व प्रसार साधनों, विभिन्न किस्म के हिन्दू धार्मिक सनातन–दुरहंकारी संस्थाओं के साथ–साथ उन देशी विदेशी संस्थाओं, स्वयंसेवी संगठनों–सेवा की आड़ में कार्यरत संस्थाओं, जो इनके अनुकूल हैं एवं सरकारी मशीनरी का व्यापक पैमाने पर इस्तेमाल करके वैचारिक, सैद्धांतिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक तौर पर जनता के दिमागों को अपने अनुकूल बदलते हुए अपने व साम्राज्यवादियों के शोषण, उत्पीड़न एवं आधिपत्य को और तीव्रता के साथ जारी रखते हुए समाज में अत्यंत खतरनाक स्थिति निर्मित किया जा रहा है. आज की ऐसी परिस्थितियों में इन सभी का सक्रिय रूप से व प्रभावशाली ढंग से मुकाबला करने की जरूरत है. सामाजिक क्रांति को सफल बनाने के लिए उत्पीड़ित जनता को एकजुट, सक्रिय व जुझारू ढंग से गोलबंद करने के लिए उनकी राय का क्रांतिकारीकरण करना अत्यंत आवश्यक है. इसलिए इस लक्ष्य को हासिल करने के लिए ऊपरी ढांचे में प्रतिक्रांति का मुकाबला करने को अत्यंत महत्वपूर्ण वैचारिक व सैद्धांतिक कर्तव्य के रूप में अपनाना चाहिए. इस हेतु हमारी पार्टी को मीड़िया, सामाजिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक, शिक्षा, बुद्धिजीवि एवं युवा क्षेत्रों में विशेष ध्यान केन्द्रित करके काम करना चाहिए, आवश्यक संगठन व संघर्ष के रूपों को तय करना चाहिए.

अंधविश्वासों व अस्पृश्यता जैसी कुप्रथाओं के खिलाफ संघर्ष करना चाहिए.

जाति अस्तित्व को सूचित करने वाले, नीचा दिखाने वाले संकेतों, भाषा, जातिवादी संस्कृति का विरोध करना चाहिए. जनवादी नजरिए से भाषा एवं संस्कृतियों में आवश्यक बदलाव लाने के लिए हमारे साहित्यिक व सांस्कृतिक क्षेत्र की संस्थाओं को कोशिश करनी चाहिए.

गोहत्या पर प्रतिबंध का विरोध करना चाहिए. गोमांस खाने पर लगी

की परिस्थितियों के असमान विकास को ध्यान में रखकर एवं जनता की राजनीतिक चेतना व संघर्ष की तैयारी पर निर्भर करके उपयुक्त विशेष निर्माणों का गठन करने के जरिए संघर्ष के क्रम में अपने स्वयं के अनुभव से जनता और उच्च स्तर के संघर्ष व संगठन के रूपों को अपना सकती है.

इस समस्या पर हमारी समझदारी के नजदीक रहनेवाली एम–एल पार्टियों, उनके जन संगठनों व अन्य जनवादी ताकतों एवं व्यक्तियों के साथ संयुक्त मोर्चे के मंचों का निर्माण करना चाहिए. उसी तरह कुछ मौकों पर मुद्दों के आधार पर हमारे साथ मिलकर काम करने आगे आनेवाली संशोधनवादी पार्टियों, उनके जन संगठनों एवं व्यक्तियों के साथ अस्थायी तौर पर मिलकर काम करना चाहिए.

इन सबके जरिए दलित एवं अन्यान्य उत्पीड़ित जातियों की जनता तथा अन्य जातियों की जनवादी ताकतों जो जातिगत उत्पीड़न का विरोध करती हैं, को राजनीतिक रूप से गोलबंद करके देश में व्यापक व मजबूत आंदोलन का निर्माण करना चाहिए. इन तमाम गतिविधियों के संचालन का हमारा लक्ष्य है, जाति व्यवस्था को रद्द करना.

इस क्रम में आंदोलन का निर्माण व्यापक व मजबूत ही नहीं बल्कि उसका नेतृत्व भी सक्षम बनता है. इन आंदोलनकारी ताकतों को सैद्धांतिक व राजनैतिक रूप से अपने अनुरूप ढालकर हमारी पार्टी में लाने के द्वारा न सिर्फ पार्टी का जनचरित्र बढ़ता है बल्कि उसकी वर्गीय बुनियाद व सामाजिक बुनियाद मजबूत होती है.

2. ब्राह्मणीय जाति आधारित सामंतवाद के खिलाफ वैचारिक क्षेत्र में ही नहीं राजनीतिक क्षेत्र में भी पार्टी को वर्ग संघर्ष तेज करना चाहिए. खासकर सरकारों, ब्राह्मणवादी संस्थाओं व हिन्दू धार्मिक दुरहंकारी संस्थाओं द्वारा, ब्राह्मणीय पीड़क जाति अनुकूल भारतीय संविधान एवं राज्य यंत्र का विभिन्न तरीकों में इस्तेमाल करते हुए अपनाए जाने वाले वैचारिक, धार्मिक व सांस्कृतिक प्रचार तथा क्रियाकलापों का जनता के बीच में पर्दाफाश करना चाहिए व उनका मुकाबला करना चाहिए. संविधान एवं राज्ययंत्र के हिन्दू धार्मिक व पीड़क जाति अनुकूल पक्षपात का भण्डाफोड़ करना चाहिए.

3. पार्टी इकाईयों द्वारा जब सामाजिक संबंधों पर शोध कार्य अपनाए जाते हैं तब बुनियाद एवं ऊपरी ढांचे में विभिन्न रूपों में आज भी व्याप्त जाति को ध्यान में रखकर वर्ग अंतरविरोधों का अध्ययन करना चाहिए. उसी तरह जातिगत अंतरविरोधों की विभिन्न अभिव्यक्तियों का भी ठोस अध्ययन करना चाहिए. ठोस अध्ययन के निचोड़ों के आधार पर कृषिक्रांति के कार्यक्रम के साथ जाति उन्मूलन के कार्यक्रम को जोड़कर अमल करना चाहिए. एक ही समय में अपनाये जाने वाले ये दोनों कार्यक्रम एक दूसरे पर सकारात्मक असर डालते हैं.

4. पार्टी में भर्ती होने वाली नई ताकतों को सैद्धांतिक, राजनीतिक, सांगठनिक व सांस्कृतिक तौर पर सर्वहारा वर्गीय विचारधारा से लैस करने के लिए एवं पुरानी ताकतों में उत्पन्न होने वाले गैर सर्वहारा रुझानों को दूर करके उन्हें सर्वहारा के लक्षणों से लैस करने के लिए, क्रांति का सक्षम नेतृत्व देने लायक पार्टी के सैद्धांतिक, राजनीतिक स्तर व सांगठनिक मजबूती को विकसित करने के लिए अनवरत जारी प्रयास के तहत एवं इस हेतु अपनाए जाने वाले अभियानों के तहत पार्टी एवं क्रांतिकारी आंदोलन के विभिन्न क्षेत्रों में मौजूद जातिगत विचारधारा के प्रभाव पर भी चर्चा करनी चाहिए. इन चर्चाओं में जातिगत विचारधारा के प्रभाव की ठोस सैद्धांतिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक एवं सांगठनिक अभिव्यक्तियों तथा उनके नकारात्मक प्रभाव – नुकसान को चिह्नित कर उन्हें सुधारने के लिए आलोचना–आत्मालोचना की पद्धति का अनुसरण करना चाहिए. इसकी मदद हेतु इस समस्या पर अध्ययन व शिक्षा को जारी रखना चाहिए. इस समस्या पर उत्पन्न होने वाले गलत रुझानों की तीव्रता एवं व्यापकता को नजर में रखकर सैद्धांतिक व राजनीतिक संघर्ष संचालित करना चाहिए. इस पद्धति को समूची पार्टी (सभी क्षेत्रों की पार्टी इकाईयों) में अमल करना चाहिए. आज के हमारे अर्द्ध उपनिवेशिक–अर्द्ध सामंती समाज को नव जनवादी समाज के रूप में बदलने के तात्कालिक लक्ष्य एवं उसके बाद समाजवादी समाज व साम्यवादी समाज में तब्दील करने के अंतिम लक्ष्य के साथ जारी सामाजिक क्रांति का नेतृत्व करने वाली पार्टी को इस मामले में भी जनता की अंग्रिम पंक्ति में खड़ा होने की आवश्यकता है.

5. अस्तित्ववादी आंदोलनों जो जनवादी आंदोलन का हिस्सा हैं, का

समर्थन करते हुए ही, इन पर पड़ने वाले आधुनिकांतरवादी सिद्धांत के प्रभाव को सैद्धांतिक रूप से चिह्नित करते हुए, इन्हें सही दिशा में संचालित करने एवं क्रांतिकारी आंदोलन का हिस्सा बनाने का प्रयास करना चाहिए. विभिन्न सामाजिक तबकों एवं पिछड़े इलाकों की जनता को चाहिए कि वे अपनी जनवादी मांगों के लिए संघर्ष करते हुए ही सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक तौर पर अपने से पिछड़े हुए तबकों व जनता के अधिकारों का न केवल सम्मान करें बल्कि उनके संघर्षों का समर्थन करने का जनवादी नजरिया अपनाने हेतु उन्हें शिक्षित करने का प्रयास करना चाहिए. तभी जनवाद एवं सामाजिक न्याय जिन्हें हमें हासिल करना है, की दिशा में व्यापाक उत्पीड़ित जनता के बीच एकता स्थापित होगी.

6. ब्राह्मणीय हिंदुत्व फासीवाद के खिलाफ व्यापक बुनियाद पर संयुक्त मोर्चा का निर्माण करना चाहिए. जाति उन्मूलन संगठनों, जनवादी चरित्र के विभिन्न दलित, आदिवासी, धार्मिक अल्पसंख्यक, उत्पीड़ित राष्ट्रीयताओं की संस्थाओं, महिला संगठनों, धर्म निरपेक्ष ताकतों एवं साथ मिलकर चलने वाली एम–एल ताकतों के साथ इसका निर्माण करना चाहिए. हिन्दुत्व फासीवाद के खिलाफ देश में जारी आंदोलन को एक सही दिशा देकर राजनीतिक रूप से संगठित करना चाहिए. साथ मिलकर चलने वाली संशोधनवादी पार्टियों एवं बुर्जुआ पार्टियों के साथ तथा उनके जन संगठनों के साथ सिर्फ मुद्दों के आध ाार पर ही कार्यनीतिक तौर पर अस्थाई संयुक्त मोर्चा बनाना चाहिए. संसदीय पार्टियों के साथ मुद्दा आधारित अस्थाई मोर्चा बनाते समय यह देखना चाहिए कि इनके प्रति जनता में भ्रम पैदा न हो.

7. उत्पीड़ित जनता में मौजूद पिछड़ी हुई विचारधारा को दूर करने के लिए वैज्ञानिक विचारधारा से लैस करने एवं जनवादी क्रांतिकारी राजनीतिक आंदोलनों में गोलबंद करने के जरिए उन्हें सचेतन करना चाहिए. इस हेतु हमरी पार्टी के नेतृत्व में कार्यरत विभिन्न जन संगठनों को योजनाबद्ध ढंग से अनवरत प्रयत्न करना चाहिए. इसमें छात्र युवाओं, साहित्यिक व सांस्कृतिक क्षेत्रों की भूमिका काफी महत्वपूर्ण रहेगी.

जातिगत विचारधारा एवं तमाम अन्य रूपों के जातिवादी विचारों के खिलाफ वैचारिक संघर्ष चलाना चाहिए. मनुस्मृति, वेदों, रामायण एवं महाभारत

सहकारिता आंदोलनों को संचालित करेंगी. इन सभी में गरीब वर्गों व सामाजिक तबकों को पहली प्राथमिकता रहेगी.

3. जनता का जनवादी राज्यसत्ता अस्पृश्यता पर कानूनी प्रतिबंध लगाएगा. अस्पृश्यता का पालन कानूनी तौर पर दण्डनीय होगा. जातिगत भेदभाव का विरोध करेगा. इसे नियंत्रित करने के लिए कानूनी तौर पर प्रयास करेगा. इसे समाज से मिटाने के लिए कानूनी तौर पर विभिन्न रूपों में प्रयास करने के अलावा जनता के बीच में जनवादी व समाजवादी चेतना को विकसित करने का प्रयास करेगा. अस्पृश्यता एवं जातीय भेदभाव के खिलाफ ही नहीं जाति व्यवस्था के रद्द के लिए कार्यरत विभिन्न जन संगठनों का समर्थन करेगा एवं उन्हें मदद पहुंचाएगा.

पुरानी सड़ी–गली व्यवस्था की विचारधारात्मक, राजनीतिक व सांस्कृतिक रूप से सेवा करने वाली पुरानी शिक्षा प्रणाली को रद्द करके देश की जनता एवं देश के सर्वांगीण विकास के लिए, सामाजिक प्रगति के लिए उपयोगी नई, वैज्ञानिक व जनवादी शिक्षा प्रणाली को शुरू करने के साथ–साथ सभी के लिए मुफ्त शिक्षा उपलब्ध कराने को अत्यंत महत्व देगा. इतिहास को वैज्ञानिक तरीके से और जनता का दृष्टिकोण से वस्तुगत मानकों पर निर्भर होकर नए सिरे से लिखती है. इस तरह ऊपरी ढांचे में एक महान क्रांतिकारी बदलाव होगा.

तमाम जातिगत असमानताओं को दूर करने के लिए योजनाबद्ध प्रयास करेगा. जब तक जरूरत पड़ेगी, शिक्षा के क्षेत्र में दलित व अन्य उत्पीड़ित जातियों के लिए आरक्षण एवं अन्य सुविधाएं उपलब्ध कराएगा. उसी तरह उन्हें नौकरियों में आरक्षण उपलब्ध कराएगा.

यहां राजसत्ता धर्मनिरपेक्ष रहेगी. सरकारी संगठनों व कामों में धर्मगत कर्मकांडों, चिन्हों और पूजा–पाठ पर निषेध लगाता है. जनता की जवाबदारी रहेगी.

मजदूर वर्ग के नेतृत्व में मजदूर, किसान, शहरी मध्यम वर्गीय जनता, राष्ट्रीय पूंजीपतियों द्वारा देशव्यापी सत्ता हासिल करने के फौरन बाद सबसे पहले लिए जाने वाले प्रधान निर्णयों में से एक है – पुरानी राज्य मशीनरी के

प्रधान अंगों – सैनिक, अर्द्ध सैनिक, पुलिस एवं न्याय व्यवस्थाओं को रद्द करके उनकी जगह जन सेवा के लिए समर्पित, जनता–सरकार–देश की सुरक्षा के लिए कार्य करने वाले, नव जनवाद को संगठित करते हुए समाजवादी परिवर्तन के तात्कालिक लक्ष्य के साथ कार्यरत नई राज्य मशीनरी का निर्माण करना. यह नई राज्य मशीनरी सत्ता से बेदखल – प्रधान उत्पादन साधनों की मिल्कियत से बेदखल शोषक वर्गों, उनके एजण्टों के साजिशों, विद्रोहों को दबाने के साथ–साथ साम्राज्यवादियों के दखलंदाजी, साजिशों–दुराक्रमणों का माकूल जवाब देगी. इस हेतु दीर्घकालिक जनयुद्ध के क्रम में पुरानी राज्य मशीनरी को ध्वस्त करते हुए मुक्तांचलों में निर्मित नई राज्य मशीनरी बुनियाद के रूप में काम करेगी. पुराने प्रशासनिक तंत्र जो कि भ्रष्ट व शोषण–उत्पीड़न का अड्डा बनकर जनता पर असहनीय बोझ बना हुआ था, के उच्च स्थानों में मौजूद लोगों में अधिकांश पीड़क जातियों व पीड़क वर्गों के ही हैं. ये शासक वर्गों का एक अभिन्न हिस्सा हैं. बचे हुए कुछ लोग दलित व अन्य उत्पीड़ित जातियों व गरीब वर्गों के ही हैं. फिर भी इनमें से अधिकांश वर्गीय उत्पीड़न के साथ–साथ सामाजिक उत्पीड़न को जारी रखने वाले ही हैं. नयी राजसत्ता पुराने नौकरशाहों में से जनवादी विचारधारा से लैस होकर ईमानदारी से काम करने वालों को छोड़कर बाकी अधिकारियों को हटाकर उनके स्थान में उत्पीड़ित वर्गों, उत्पीड़ित तबकों व जनवादी ताकतों से ईमानदारी से काम करने वालों को चुनकर फौरन जिम्मेदारियों में नियुक्त करने के साथ ही जरूरतों के मुताबिक उत्पीड़ित वर्गों, उत्पीड़ित तबकों एवं जनवादी तबकों से संबंधित लोगों को शिक्षित, प्रशिक्षित करके भर्ती करेगी. पुरानी राज्य मशीनरी के निचले व मध्यम स्तर के कर्मचारियों में से प्रतिक्रांतिकारी ताकतों को हटाकर बाकी को शिक्षित व जनवादीकरण करके इस्तेमाल करने की कोशिश करते हुए ही मुख्यतः उत्पीड़ित वर्गों, उत्पीड़ित तबकों व जनवादी ताकतों से भर्ती करेगी. इससे भी सामाजिक संबंधों व ऊपरी ढांचे में बहुत बड़ा बदलाव होकर जाति व्यवस्था का सामाजिक आधार समाप्त हो जाएगा.

4. जनता की जनवादी राज्यसत्ता अंतरजातीय व अंतरधर्मीय विवाहों को प्रोत्साहित करेगी. इस तरह के विवाह करने वालों को सुरक्षा प्रदान करेगी. प्रोत्साहन दिए जाएंगे. नव जनवादी क्रांति के क्रम में ही पार्टी, जनसेना, जन

संगठनों एवं जन सरकारों में अंतरजातीय, अंतरधर्मीय एवं अंतरराष्ट्रीय विवाह अत्यधिक या उल्लेखनीय स्तर पर हो रहे हैं, जो समाज को काफी प्रभावित कर रहे हैं. क्रांति की जीत के बाद भी इन क्षेत्रों के लोग अंतरजातीय व अंतरधर्मीय विवाह करने में जनता की अग्रिम पंक्ति में खड़े रहेंगे. समाज में इस तरह के विवाहों को प्रोत्साहित करने के लिए सांस्कृतिक संस्थाएं एवं सांस्कृतिक टोलियां लगातार कोशिश करेंगी.

वैचारिक व सांस्कृतिक क्षेत्रों में ब्राह्मणीय आचारों, पूजाओं, रूढ़ियों एवं अंध विश्वासों का विरोध करेगी. जातिगत व धार्मिक पक्षपात की रोकथाम के लिए कानूनी तौर पर कोशिश करेगी. साथ ही स्वयं के धार्मिक विश्वासों का पालन करने के व्यक्तिगत अधिकार की रक्षा करेगी. शिक्षा व्यवस्था में मूलभूत परिवर्तन लाने के जरिए, विज्ञान शास्त्रों के विकास के द्वारा, भौतिकवाद, विज्ञानशास्त्रों एवं मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओवाद को जनता के बीच में फैलाने के जरिए, जनता के सांस्कृतिक स्तर को विकसित करने के द्वारा, सामाजिक जीवन के तमाम क्षेत्रों में व्यापक जन समुदाय की भूमिका को बढ़ाने के द्वारा एवं सत्ता से बेदखल शोषक वर्गों का प्रतिनिधित्व करने वाले प्रतिक्रांतिकारी ताकतों द्वारा अत्यंत साजिशाना ढंग से, धोखेबाजी तरीके से, कुत्सित व खुलेआम किए जाने वाले सैद्धांतिक, राजनीतिक, आर्थिक व भौतिक हमलों एवं उनकी विचारधारा, संस्कृति के खिलाफ लगातार वर्ग संघर्ष जारी रखने के द्वारा समाज में व्याप्त ब्राह्मणीय विचारधारा एवं संस्कृति के प्रभाव को काफी हद तक कम किया जाएगा. व्यवहार में मैला ढोने की प्रथा को निषेध निषेध किया जाएगा. सीवरेज टैंकों, पाइप लाइनों, नालियों, गटर सफाई, सफाई में, विशेषकर एक जाति से संबंध रखने वालों को ही नियुक्त करना निषेध किया जाएगा. इस काम में कार्यरत दलितों अन्य रोजगार साधनों उपलब्ध किया जाएगा. सफाई कामों में आधुनिक तकनीक को इस्तेमाल किया जाएगा. इस तरह ऊपरी ढांचे एवं सेवा क्षेत्र का क्रांतिकारीकरण होगा. इस हेतु मजदूर वर्गीय पार्टी एवं राजसत्ता के साथ–साथ सांस्कृतिक–वैज्ञानिक–शिक्षा–वैचारिक व अन्य क्षेत्रों में कार्यरत संस्थाएं लगातार कोशिश करेंगी.

5. पहले जनता की जनवादी राज्यसत्ता, उसके बाद समाजवादी रात्यसत्ता समाज में मौजूद मानसिक व शारीरिक श्रम के बीच के अंतर, शहरों व गांवों

के बीच के अंतर, लिंग, जाति एवं राष्ट्रीयता के अंतरों को दूर करने के लिए योजनाबद्ध प्रयास करेगी. समाजवादी समाज में मजदूर वर्ग के नेतृत्व के तहत सही लाईन के मार्गदर्शन में लगातार वर्ग संघर्ष को जारी रखेगी. ऊपरी ढांचे में क्रांति को जारी रखते हुए उत्पादन संबंधों का क्रांतिकारीकरण करेगी. समाज में उपयुक्त भौतिक व बौद्धिक परिस्थितियों को निर्मित करने के द्वारा यह अंतर सीढ़ी–दर–सीढ़ी घटते हुए आखिर उनके अस्तित्व का भौतिक आधार रद्द हो जाएगा. इसी तरह वर्गों, जो सभी प्रकार के शोषण व उत्पीड़न के लिए मूलभूत कारण हैं, के अस्तित्व का भौतिक आधार खतम होकर वर्ग ही समाप्त हो जाएंगे. मानव जाति कम्युनिजम में कदम रखेगा.

6. भारत की नवजनवादी क्रांति को ही नहीं क्रांति के बाद नव जनवादी व्यवस्था, उसके बाद समाजवादी व्यवस्था को बचाए रखने के लिए विगत, आज और कल की दुनिया के मजदूर वर्ग की क्रांतियों के सकारात्मक व नकारात्मक अनुभवों से विशेषकर चीन में कॉमरेड माओ के नेतृत्व में संचालित महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति से सीख लेनी चाहिए. मजदूर वर्ग के नेतृत्व में भारत की पीड़ित जनता को चाहिए कि वह विश्व मानव जाति के साथ मिलकर साम्यवाद हासिल करने के लिए आगे बढ़ने हेतु महान चीनी सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति के अनुभवों सहित अन्य क्रांतियों के सकारात्मक अनुभवों को ऊंचा उठाए रखे. मजदूर वर्ग की तानाशाही के तहत सही दिशा में समाजवादी निर्माण को संगठित करते हुए आगे बढ़ाने हेतु एवं विश्व समाजवादी क्रांति की विजय के लक्ष्य के साथ अपने हिस्से की सक्रिय भूमिका निभाने के रास्ते में, कदम–दर–कदम अड़चन बनने वाली तथा पार्टी–सेना–सरकार के नेतृत्व में छुपी हुई आधुनिक संशोधनवादी ताकतों द्वारा पूंजीवाद की पुनरस्थापना के लिए किए जाने वाले षड़यंत्रों व विद्रोहों को दबाना चाहिए, समाजवाद का नाश करने साम्राज्यवादियों द्वारा की जाने वाली दखलंदाजी एवं दुराक्रमण को परास्त करना चाहिए. यह प्रगति 'आम तौर पर समस्त वर्ग और वर्गभेद तथा उनके बुनियाद के रूप में रहे तमाम किस्म के उत्पादन संबंध, उनसे संबंधित समस्त सामाजिक संबंध, इन सामाजिक संबंधों से उद्भव होने वाले समस्त विचारों का निर्मूलन' के साथ जुड़ी हुई प्रक्रिया हैं, ऐसा मार्क्स कहते हैं. इस हेतु ऊपरी ढांचे में निरंतर वर्ग संघर्ष को जारी रखने के साथ–साथ सर्वहारा

सांस्कृतिक क्रांतियों को संचालित करना चाहिए. इस तरह ऊपरी ढांचे में लगातार वर्ग संघर्ष को जारी रखने के द्वारा एवं सांस्कृतिक क्रांतियों को चलाने के द्वारा जनता के वैश्विक दृष्टिकोण में क्रांतिकारी बदलाव लाते हुए उत्पादन संबंधों का क्रांतिकारीकरण करना चाहिए. समाजवाद के दीर्घकालीन क्रम में उत्पन्न होने वाले मोड़ों, घुमाओं को पार करके साहस के साथ, सशक्त ढंग से प्रयास करने के जरिए साम्यवाद को हासिल करने के लक्ष्य से समाजवाद को संगठित करना चाहिए. ठोस रूप से भारत देश में सामाजवादी क्रांति को आगे बढ़ने के क्रम में भी ब्राह्मणवाद और उसके ठोस व्यक्तीकरणों के खिलाफ संघर्ष में प्रगति हासिल करना, उसे सघन बनाना महत्वपूर्ण कर्तव्य के रूप में रहता है. इसी क्रम में ही समाज में ऐसी सामाजिक परिस्थितियों को निर्मित करना चाहिए जहां सभी किस्म के शोषण व उत्पीड़न के अस्तित्व के लिए कोई बुनियाद न हो. यानी वर्गविहीन समाज का गठन होना चाहिए. नए मानवों का उदय होना चाहिए. साम्यवाद में कदम रखना चाहिए. इससे समूची मानवजाति वर्ग उत्पीड़न ही नहीं सभी प्रकार के सामाजिक उत्पीड़नों को समाप्त करेगी.

केन्द्रीय कमेटी

भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी)